The Academic
International Journal of Multidisciplinary Research

An Online Peer Reviewed / Refereed Journal
Volume 3 | Issue 7 | July 2025
ISSN: 2583-973X (Online)
Website: www.theacademic.in

यज्ञ की वैज्ञानिक प्रमाणिक्ता

देशवाल ज.पा.(जयपाल देशवाल)[1] , मेघा रानी [2] ,कीर्ति [3] ,मुकेश कमारी [4], डॉ0 राकेश कुमार [5] , शैलेन्द्र [6]

[1,2,3,4,6] रसायन शास्त्र विभाग, के. एम. राजकीय महाविद्यालय, नरवाना, जीन्द (हरियाणा)

[5] संस्कृत विभाग, सी.डी. एल.यू. सिरसा

DOI : https://doi.org/10.5281/zenodo.16908147

ARTICLE DETAILS

Research Paper

Accepted: 31-07-2025

Published: 10-08-2025

Keywords:

धार्मिक परंपरा, देव पूजा, संगती करण, यज्ञ

ABSTRACT

भारतीय ज्ञान विज्ञान आधारित सामाजिक सांस्कृतिक एवं धार्मिक परंपरा में पंच महायज्ञ-ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ (अग्निहोत्र), पितृ यज्ञ, बलिवैश्व यज्ञ एवं अतिथि यज्ञ का शास्त्र सम्मत विधान किया है। ये कर्म अपने शरीर, मन और आत्मा को शांत और शुद्ध करके चित लगाकर विधिवत करने चाहिए यज्ञ से विद्वानों का सत्कार यथा योग्य शिल्प विद्या अर्थात रसायन जो की पदार्थ विद्या का उपयोग और विद्या आदि शुभ गुणों का दान, अग्निहोत्र से वायु शुद्ध वृष्टि जल औषधि की पवित्रता करके सभी जीव जंतुओं को सुख पहुंचाना है।यज्ञ शब्द के तीन प्रमुख अर्थ है - देव पूजा ,संगती करण और दान। प्रत्येक श्रेष्ठ कार्य को यज्ञ कहा गया है। यज्ञ हवन के रूप में प्रकृति की शुद्धता के लिए अनिवार्य है।

यज्ञ में उत्तम पदार्थों –

सुगंध, मिष्ठ, पुष्टि कारक व रोग नाशक आदि गुणों से युक्त की आहुतियां वेद के मंत्र उच्चारण के साथ हवन कुंड में दी जाती हैं। इसमें सभी पदार्थों को अग्नि 300 से 1300°C तापमान पर स्थुल से सूक्ष्म रूप में अप घटित कर देती है। तत्वत: पदार्थ का कभी नाश नहीं होता है, एक अवस्था से दूसरी अवस्था में बदल जाता है। Accordingly Law conservation of mass--matter neither be created ,nor be destroyed but change its form ,OR In all chemical and physical changes total mass of the system remains constant. अति सूक्ष्म आत्मा अजर ,अमर व नित्य है।वह कभी नहीं मरती

,परंतु अपने गुण कर्म स्वभाव एवं धर्म अनुसार अलग-अलग शरीर धारण करती है।(गीता)। भौतिक अग्नि होम द्रव्यों को परमाणु रूप में सुक्ष्म वायु और जल के साथ मिलकर पर्यावरण को शुद्ध करती है। जैसे 10 ग्राम हींग को भूनकर छौंक लगाने से लगभग 50 किलोग्राम दाल सुगंधित हो जाती है। अतः अग्नि में डालने से पदार्थ हल्का होकर शीघ्र ही वायु में फैल जाता है। उसकी भेदक शक्ति बढ़ जाती है। यह तथ्य ग्राहम के गैसीय विसरण के नियम (Grahms law of diffusion - $R1/R2=\sqrt{d1/D}$) का विधान है। निश्चित ताप एवं दबाव पर गैसों की विसरण गतियां और उनके घनत्व के वर्गमूल की विपरीत अनुपाती होती हैं।यहां पर Boyle's law and Charle's law के नियम अनुसार उच्च तापमान पर पदार्थ का आयतन अधिक बढ़ जाता है। प्रातः एवं साय काल में सूर्य के प्रकाश में यज्ञ हवन किया जाता है। सूर्य की पराबैंगनी किरणों की शक्ति से कार्बन डाइऑक्साइड और पानी मिलने पर फॉर्मलीन एवं ऑक्सीजन उत्पन्न होती है। ($CO2+H2O$ -------> $HCHO +O2$). यही ऑक्सीजन वायुमंडल में पराबैंगनी किरणों में ओजोन($O3$) में बदल जाती है। परिणाम स्वरुप सुरक्षा कवच ओजोन परत संघन हो जाती है। यह पृथ्वी पर जीव जंतुओं एवं वनस्पतियों को सूर्य की हानिकारक किरणों से बचाती है। हवनकुंड में दहन से हजारों प्रकार के रसायन जैसे हाइड्रोकार्बन, एल्डिहाइड, फोरमलडीहाइयड, एसिड एल्डिहाइड, परफ्यूरल, प्रोपियोनल्डिहाइड कीटोन- एसीटोन, मिथाइल इथाइल कीटोन,अमल- फार्मिक एसिड, एसिटिक एसिड, अल्कोहल, मिथाइल अल्कोहल, एथिल अल्कोहल, फिनोल ,कार्बन डाइऑक्साइड एवं पानी और अनेकों औषधीय पदार्थ इत्यादि उत्पन्न होते हैं। प्रत्येक आहुति देने से पूर्व उसे आहुति के लिए निश्चित मंत्र का उच्चारण करने का विधान है। इससे हवन सामग्री अर्पित करने का समय व्यवस्थित हो जाता है ,तथा दहन क्रिया सुविधा पूर्वक चलती रहती है। साथ में वेद की रक्षा तथा समय का सदुपयोग भी होता है। मत्रों से यज्ञ के प्रत्येक अंग का साथ-साथ ज्ञान हो जाता है। क्योंकि उसे क्रिया से संबंधित मंत्र का तत् -२ क्रियाओं के अवसर पर उच्चारण किया जाता है। इसे वियोग कहते हैं। हवन क्रिया से औषधीय सामग्री, समिधा,घृत, मिष्ठान,तिक्ष,तील एवं अन्य उपकारी पदार्थों इत्यादि के दहन से रोग नाशक ,वातावरण शुद्धता एवं वर्षा सहायक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इससे शुद्ध औषधि वनस्पति व खाद्यान्न उत्पन्न होने से प्रजा में सुख शांति होती है।

परिचय-

यज्ञ ,हवन,होम अग्निहोत्र सभी एक ही है । ये विज्ञान आधारित प्रक्रियाओं से वायु शुद्ध होने से वृष्टि जल,औषधि और वनस्पति की पवित्रता से प्राकृतिक सौंदर्यता, सहनशीलता, क्षमा, तप, त्याग, पुरुषार्थ, वैराग्य ,दया ,करुणा, संवेदनशीलता,उपयोगिता से आत्म शुद्धि,मन, भाव, विचार, संस्कार, श्रेष्ठ कर्म एवं सदाचार से चरित्र निर्माण से मानव निर्माण से दिव्यात्मा से महात्मा से महामानव निर्माण धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष प्राप्त करना है। महर्षि दयानंद सरस्वती ने वेद भाष्य में

लिखा है कि वेद मत्रों के आधार पर यज्ञ का अर्थ वायु तथा वर्षा जल की शुद्धि, शिल्प विद्या की सिद्धि और अभिवृद्धि, शिल्प कार्य, यंत्र कला, विद्वानों और प्रौद्योगिकी की उन्नति होती है। सभी मंगल कार्यों से पूर्व अपने और पराए की कल्याण के लिए यज्ञ द्वारा ईश्वर उपासना की जानी चाहिए। अग्निहोत्र से ईश्वर आज्ञा का पालन, पवन और वर्षा जल शुद्ध सब पदार्थ में अत्यंत उत्तमता और जिवों में सुख होता है ।इसलिए अग्निहोत्र करना उचित माना गया है। प्रकृति और संस्कृति में समायोजन रखते हुए सभी जीव जंतुओं का उद्धार एवं संरक्षण करना मानवीय उत्तरदायित्व है। सभी मानव समाजों में हवन की किसी ने किसी रूप में महत्ता है।आदि काल से लेकर आज तक यज्ञ हवन जीवन का अंग है। अनेकों देश में हवन को बीमारियों की रोकथाम के लिए प्रयोग किया जाता है। शब्दावली अनुसार नाम बदल गए हैं।

मानव आनंद प्राप्ति एवं आत्म उन्नति के लिए सतत् प्रयासरत है। सभी दार्शनिक इस लक्ष्य प्राप्ति के लिए साधना करते रहे हैं। यज्ञ इस साधना का निखार हुआ रूप है। यज्ञ को मनुष्य ने किसी ने किसी रूप में सदा ही स्वीकार किया है। अथर्ववेद (9,63,1) में कहा गया है-

"हे ब्रह्मनस्पते। उठ खड़ा हो; यज्ञ कर ; उत्तम पुरुषों को यज्ञ भावना से परिचित करा तथा स्मारक का अनुसरण करते हुए आयु प्राण प्रजा पशु तथा यजमान की कीर्ति को बढ़ा।"

शतपथ ब्राह्मण (1,1,8,8) नै यज्ञो वै विष्णु: कहा। शतपथ (1,7,1,5) ने यज्ञ सर्वोत्तम कर्म घोषित किया है -- यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म। छान्दोग्य उपनिषद (2,23,1) ने अध्ययन और दान को धर्म का प्रथम स्कंध माना है -- **त्रयो धर्मस्कन्धा: यज्ञाध्ययनदानमिति प्रथम:।** वैदिक काल में पाक्षिक,मासिक, चतुर मासिक एवं षाण्वमासिक आदि बड़े -2 यज्ञ किए जाते थे। श्रावणी और आषाढ़ी के अवसरों पर नए अन्नों द्वारा यज्ञ होता था। उपनिषदों में यज्ञ हवन संबंधित अनेकों प्रसंग मिलते हैं। उपनिषद में वाज श्रवा द्वारा सर्वमेध (सर्वहुत) यज्ञ विवरण (1,1,1) एवं इसी उपनिषद में यमाचार्य द्वारा नचिकेता को दिया गया स्वग्रयाग्नि यज्ञाग्नि उपदेश (1, 1,15) विशेषतः अवलोकनीय है। मनुस्मृति (4,21) में पञ्च महायज्ञों के अनुष्ठान का विधान है।

ऋषियज्ञं देवयज्ञं भूतयज्ञं च सर्वदा।नृयज्ञं पितृयज्ञंञ्च यथाशक्तिं न हापयेत।।

सन्ध्या एवं यज्ञ न करने वालों को सभी द्विज-कर्मों से निकाल देने का आदेश किया है—

न तिष्ठति तु य: पूर्वों नोपास्ते यस्तु पश्चिमाम्।

स शुद्रवद् बहिष्कार्य सर्वस्माद् द्विजकर्मण:।।

रामायण काल में महाराज दशरथ का महर्षि श्रृंग पौरोहित्य में पुत्रेष्टि यज्ञ करवाने, (बालकांड 8,2-5) तथा विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा के लिए राम और लक्ष्मण को भेजने, (बालकांड 13,1-5) की कथा सर्वविदित है। महाभारत काल में भी यज्ञों का

प्रचलन था। पांडवों ने खांडव वन को जला कर इंद्रप्रस्थ की स्थापना की थी और श्री कृष्ण की प्रेरणा से राज सूय यज्ञ किया था। महाभारत युद्ध उपरांत महाराज युधिष्ठिर ने अश्वमेध यज्ञ किया था। भारतीय राज्य परंपरा में राजा -महाराजा अपने उत्तराधिकारियों के राजतिलक के अवसर पर अनेक बृहद् यज्ञों का आयोजन करते थे। विदेशों में भी यज्ञ हवन का प्रचलन रहा है। हनुमान जी जब सीता की खोज में लंका गए तो वहां के निवासियों को यज्ञ हवन करते हुए देखा था। सुदूर पूर्व में भी यज्ञों का प्रचलन निकट भूतकाल में भी था। बोर्नियो कूटेई प्रान्त से प्राप्त **1879** ईस्वी के शिलालेख बताते हैं कि वहां के सम्राट मूल वर्मन् (400ई.) ने बहु सुवर्णक यज्ञ किए थे-

श्रीमुलवर्म्माराजेनद्रो यष्ट्वा बहुस्वर्णकम्।

तस्य यज्ञस्य यूपोऽयं द्विजेन्दरै सम्प्रकल्पित:।।

कम्बुज देश-कंबोडिया में वैदिक यज्ञ किए जाते थे। शिवाचार्य सम्राट् ईशान वर्मन द्वारा (925-928 ई.) जयवर्मन (929-941ई.) तथा राजेंद्र वर्मन (946 -966ई.) यज्ञ के होता थे। चीन में भी राजा फूसी ने यज्ञों का आयोजन किया था। चीन के यज्ञों के संबंध में डॉक्टर लैग लिखते हैं," यज्ञों से पूर्व व्रत अनेक प्रकार से शुद्धियों का करना राजा और उसके पुरोहितों के लिए आवश्यक होता था। सुगंधित रसों की आहुतियां दी जाती थी ताकि देवता बुलाए जा सकें और उनका आह्वान करने का एक कार्य कर्ता था, जो मुख्य द्वार पर खड़ा होता था। चीन और जापान में यज्ञ को घोम कहते हैं। वहां मंदिर में आज भी धूप जलाने की प्रथा है। ईरान के यहूदियों में यज्ञों का बहुत प्रचलन था। वे यज्ञ कुंड को कैर कहते थे। रोम एवं यूनान में भी यज्ञों की परम्पराएं पाई जाती है। रोम में बेसटा देवी मंदिर में कुंड में अग्नि जलती रहती है तथा उस अग्नि में सुगंधित पदार्थ डाले जाते हैं। बौद्ध भिक्षु चमन लाल ने अमेरिका के विषय में महत्वपूर्ण खोज की है। उन्होंने लिखा है कि प्राचीन काल में वहां के विद्यार्थियों का कर्तव्य होता था कि वे मंदिर में झाड़ू लगाएं तथा पवित्र अग्नि की देखभाल करें। बच्चों के जन्मदिन के अवसर पर जन्म से 4 दिनों तक हवन किया जाता था। रेड इंडियन तथा मिस्र में भी यज्ञ का प्रचार था। आयरलैंड तथा दक्षिणी अमेरिका में महामारी की रोकथाम के लिए अग्नि जलाई जाती थी। आग जलाने की प्रथागत शताब्दी तक स्कॉटलैंड में भी थी। ईसाई तथा मुसलमान भी लोबान और उद्वत्ती जलते थे। अरबी भाषा में अगर को उद कहते हैं। सिख और जैनी भी धूप जलाकर वायु को शुद्ध करते हैं। सिख मत एवं इतिहास के अधिकारी विद्वान स्वामी स्वतन्त्रानंद एवं स्वामी अमृतानंद ने अपनी पुस्तकों में सिख मत तथा गुरुओं की यज्ञ के प्रति श्रद्धा की चर्चा निम्नलिखित प्रमाणों के साथ की है -**तिते घीये होम जग सद पूजा, पड़यै कारज सोहैल**(वार माज महला-1,26) अर्थात इस घी से हवन-यज्ञ और पूजा पाठ के काम शोभा पाते हैं।इसी प्रकार भाई गुरदास जी ने चौथी वार में लिखा है -- घी ते होवन होम जग, ढ़ंग सुआरथ चज अचारा (वार 4, श्लोक पद 8) घी, सामग्री, समिधाएं से हवन यज्ञ, पर्व, शुभ

कार्य और सदाचार संबंधित पवित्र कर्म होते हैं। गुरु गोविंद सिंह ने जो हवन किया था उसके विषय में ज्ञानी ज्ञान सिंह ने लिखा है कि गुरु महाराज ने अपनी स्वीकृति पंडित केशव जी को इस प्रकार दी थी," जग होम बेसिक करावे। एक तो धर्म हमारा सार।करत रहे नृप मुनि अवतार। अर्थात हे पंडित जी यह हवन तो हमारे धर्म का असर है। इसे राजे- महाराज, ऋषि -मुनि और अवतार करते आ रहे हैं, इसलिए हम भी इसे करना चाहते हैं। जिससे सारे संसार को सुख शांति और समृद्धि प्राप्त हो। अतः हम सब हवन करेंगे तो वर्षा होती रहेगी, अकल नहीं रहेगा, अधिक अन्न उत्पादन होगा। अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि होगी।शूरवीरता आएगी, जनता शुभ कर्म करने लगेगी। वर्ण आश्रमी जो कायर बन रहे हैं, उन्हें जब यज्ञ हवन की वायु लगेगी तो वे शेरों की तरह शक्तिशाली होंगे।उनके हृदय में शूरवीरता उत्पन्न होगी ।तब वे प्राचीन धर्म को धारण करने लगेंगे, इसमें प्रभुता, स्वाभिमान, स्वावलंबन ,आरोग्यता, क्रांति विजय का ज्ञान और उत्तम संतान उत्पन्न होगी। निर्भयता, यश और सब दिव्य गुण गुरु घर में आ जाएंगे।भाग्यवान बालक जन्म लेंगे। शीतल आदि रोग नष्ट होंगे। काम, क्रोध आदि आसुरी भाव यज्ञ हवन को देख कांपने लगेंगे। सत्य धर्म आदि 52 प्रकार के गुण जो ऋग्वेद में लिखे हैं, वे अवश्य ही जगत में आएंगे। जब हम सब विधिवत यज्ञ हवन करेंगे।"

(पृष्ठ 1 से 7 यज्ञ विमर्श डॉ. राम प्रकाश आर्य)

यज्ञ हवन द्वारा वायु गुणवत्ता, जल की पवित्रता, भूमि की उर्वरा शक्ति ,पर्यावरण शुद्धिकरण एवं प्राकृतिक चिकित्सा के लिए गहनता से वेद, आयुर्वेद, मनुस्मृति, वैशाषिक दर्शन, चरक संहिता, निघंटु, यज्ञ विमर्श एवं अन्य शास्त्रों के साथ विदेशी विद्वानों के अन्वेषणात्मक पत्रों का अध्ययन , विश्लेषण, रासायनिक जांच एवं प्रशिक्षण की आवश्यकता को मध्य नजर रखते हुए व्यापक यज्ञ हवन पर अन्वेषण किया गया है।

अध्ययन कार्य क्षेत्र एवं अन्य प्रायोगिक गतिविधियां--

3. प्रक्रिया -हवन के लिए शास्त्रों में यज्ञशाला ,यज्ञ कुंड, यज्ञ पात्र, हव्य, द्रव्य तथा यज्ञ करने की विधि का विस्तृत विवरण है।

आधुनिक विज्ञानद्वारा अनुमोदित तथ्य-

(क). वैज्ञानिक एवं औद्योगिक प्रशिक्षण परिषद (CSIR) द्वारा शोध में पाया गया है कि हवन से एंटीवायरस और एंटीबैक्टीरियल गुण वायु में बढ़ते हैं।

(ख). बनारस से हिंदू विश्वविद्यालय के अनुसार हवन से उत्पन्न धूएं से रोग जनित 94% बैक्टीरिया समाप्त हो जाते हैं।

(ग). नासा के छात्रों के शोध के अनुसार यज्ञ से वातावरण में शुद्धता होती है और विषैला रसायनों का प्रभाव दिन प्रतिदिन काम हो जाता है।

(घ). राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान द्वारा किए गए शोध में पाया गया है कि यज्ञ हवन के धुएं से हानिकारक जीवाणु और विषाणु लगभग 94% नष्ट हो जाते हैं। यज्ञ के धुएं का प्रभाव वातावरण में लगभग 30 दिन तक बना रहता है। इसके प्रभाव से वातावरण में हानिकारक कीट- पतंगे, जीवाणु और विषाणु उत्पन्न नहीं होते हैं। हवन से मानवीय स्वास्थ्य के साथ पशु- पक्षियों एवं वनस्पतियों के साथ कृषि और प्रकृति पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

4. भावना –

शास्त्र कारों में यज्ञ सामग्री ,संमीधाओं और घृत को अच्छी प्रकार शोध परक लेने की बात कही है। महर्षि दयानंद सरस्वती ने लिखा है कि घृत को उष्ण करें,छाने और उसमें शुद्ध सुगंधित पदार्थ मिलकर शुद्ध करना चाहिए। परिवार एक यज्ञ है ,जिस संस्था में हम काम करते हैं ,वह भी एक यज्ञ है, हम उस यज्ञ में अर्पित होने वाली सामग्रियां हैं, हव्य द्रव्य भी हैं ,समिधाएं हैं यदि छोटा सा अग्निहोत्र जो प्रातः साल काल में किया जाता है। यज्ञ में घुन लगी समिधाएं नहीं डालनी चाहिए ,तो क्या परिवार, समाज ,संगठन , संस्था, और राष्ट्र के यज्ञ में धुन लगी उसमें अर्पित करनी चाहिए? इसलिए हम अग्निहोत्र एवं यज्ञमयी भावना से कोई काम करना चाहते हैं तो स्वयं को समिधा के रूप में अर्पित करने से पहले अपने अंदर के अवगुण और दोषों को निकालना पड़ेगा। यदि अवगुण युक्त सामग्री अर्पित कर दें, तो दुर्गंध ही पैदा होगी ,सुगंधित वातावरण नहीं बन पाएगा। इसलिए व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक,सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं राष्ट्रीय यज्ञ आहुति करने से पूर्व स्वयं को तपाकर पूर्ण पवित्र भाव से कार्य करना पड़ता है। महर्षि मनु से लेकर महर्षि दयानंद, मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचंद्र महाराज योगीराज श्री कृष्ण चंद्र महाराज से महाराणा प्रताप सिंह,शिवाजी महाराज, गुरु गोविंद सिंह, महाराजा सूरजमल, राजगुरु, सुखदेव, भगत सिंह, राम प्रसाद बिस्मिल इत्यादि महान क्रांतिकारियों एवं राष्ट्र की रक्षा सुरक्षा में बलिदानियों में यही यज्ञमयी भावना रही है। यज्ञमयी भावना तो "इदन्न मम्", यह मेरे लिए नहीं राष्ट्र के लिए है, सबके लिए है किसी अकेले के लिए नहीं। पूर्ण आहुति ओ३म् सर्वं वै पूर्णं स्वाह की भावना से की जाती है। अंत में शांति पाठ में सर्वत्र शांति हो, सभी को शांति मिले ऐसी भावना व्यक्त की जाती है।

4. यज्ञशाला-

अग्निहोत्र के लिए यज्ञ मंडप का निर्माण किया जाता है। महर्षि दयानंद के अनुसार यज्ञशाला अधिक से अधिक 16 हाथ सम चौरस चौकोण और नून से न्यून 8- हाथ की हो। यदि 16 हाथ की समचौरस हो तो चारों ओर 20 खम्भे और आठ हाथ की हो तो 12 खम्भे लगाकर उसे पर छाया करें। छाया की छत वेदी की मेखला से अवश्य 10 हाथ ऊंची करने और यज्ञशाला के

चारों दिशाओं में चार द्वार रखने का विधान है। ((ऋषि दयानंद सरस्वती, संस्कार विधि, सामान्य प्रकरणम्; तुलना-पारस्कर ग्रह सूत्र क. 4, क.1 का गदाधर भाष्य।)

5. यज्ञ कुण्ड-

यज्ञकुण्ड सोना, चांदी, तांबा, लोहा एवं मिट्टी से बनाया जाता है।इसका परिमाण आहुतियों की संख्या पर निर्भर करता है। दैनिक यज्ञ के लिए एक किसी धातु या मिट्टी की ऊपर 12 या 16 अंगुल चौकोर ,उतना ही गहरा एवं नीचे 3 या 4 अंगुल परिणाम से वेदी इस प्रकार बनाएं ऊपर जितनी चौड़ी हो, उसकी चतुर्थांश निचे चौड़ी रहे। इसी अनुपात में बृहद यज्ञ के लिए भी यज्ञ कुण्ड बनाने का विधान है। एक यज्ञ कुण्ड का यह जाकर पूर्णतया वैज्ञानिक है। इसकी बनावट से कुण्ड में काम लकड़ी जलाने पर भी अधिक गर्मी पैदा होती है। समिधाओं को भी व्यवस्थित रूप में रखा जाता है, जिससे वायु का प्रवेश न अधिक और न ही बहुत कम हो जाए। यज्ञ कुण्ड की बनावट तथा समिधाओं के चयन करने की विधि हवन के लिए वांछित एवं आवश्यक गर्मी पैदा कर देती है। यज्ञ कुंड के नीचे के भाग में लगभग 300° सेल्सियस तापमान होता है और ऊपर का तापमान 1300° सेल्सियस तक पहुंच जाता है। शेष भाग में विभिन्न स्थानों पर अलग-अलग तापांश होता है। अग्नि के कुछ हिंदी में हो जाने पर भी तापमान ढाई सौ डिग्री से 600 डिग्री सेल्सियस तक रह जाता है। हवन के लिए यह गर्मी की पर्याप्त मात्रा है।**(दृष्टव्य: पंडित युधिष्ठिर मीमांसक, मेरी दृष्टि में स्वामी दयानंद और उनका कार्य, रामलाल कपूर ट्रस्ट, बहालगढ़, प्रथम संस्करण, संवत 2048 वि., पृष्ठ 8-9)**

6. यज्ञपात्र-

यज्ञ तथा अन्य धार्मिक कृत्यों के लिए साधारणतया सोना,चांदी, तांबा एवं लकड़ी से बने पात्रों का प्रयोग किया जाता है। सोना एवं चांदी पर अन्य पदार्थों और वायु का प्रभाव नहीं होता और तांबे के पात्र का अधिक प्रयोग किया जाता है। यह कृमि एवं रोगाणु नाशक है। (अमेरिका के प्रसिद्ध डॉक्टर मुनेरने ने अनेकों प्रयोग द्वारा यह सिद्ध किया था कि तांबे के पतरे या बर्तन आदि पर किसी भी रोग के कीटाणु जीवित नहीं रह सकते है। ठठेरों को मलेरिया, हैजा आदि संक्रामक रोग शायद ही कभी होते हो)। यज्ञिय पत्रों में आज्यस्थाली (घृत रखने का पात्र), प्रोक्षणीपात्र (हाथ धोने के लिए जल), शाकल्य पात्र (सामग्री),आचमनी,चमचा, चिमटा आदि मुख्य हैं। हवन के समय यज्ञवेदी यज्ञ सामग्री और पात्रों को पूर्ण स्वच्छ एवं शुद्ध करने का विधान है।

7. समिधा:-

यज्ञ अग्नि प्रज्वलित रखने के लिए प्रयोग किसे जाने वाले कास्ट को समिधा या इध्म कहते हैं। यज्ञ में विशेष प्रकार की लकड़ियों का प्रयोग किया जाता है। हवन में प्रयोग की जाने वाली समिधा के निम्नलिखित गुण हैं--

१. लकड़ी सुविधा पूर्वक जलने वाली हो, छाल युक्त अधिक गुणकारी होती है।

2. लकड़ी साफ एवं स्वच्छ हो। मालिन, दूषित एवं कीड़ा लगी हुई ना हो।

3. जलने पर लकड़ी दुर्गंध और धुआं ना दे।

4. लकड़ी जलकर राख हो जाए तो उत्तम है। कोयला बनाने वाली लकड़ी कम उपयोगी है।

5. शतपथ ब्राह्मण (1,3, ,3,20) में समिदाओं के लिए निम्नलिखित वृक्षों का विधान किया गया है।

आहिल्क सुत्रावलि में ढाक (पलाश), खंकरा, फल्गु, वट,पीपल,वंशज, गूलर, चन्दन,सरल, देव दारू, शाल ,खैर आदि का विधान किया है। वायु पुराण में ढाक,काकप्रिय, बड़, पिलखन ,पीपल, वंशज, गुलर ,बेल पत्र, चंदन, पित्त दारू, शाल , खैर, जामुन, अशोक ,आम इत्यादि को यज्ञ उपयोगी वृक्ष माना है। महर्षि दयानंद सरस्वती ने यज्ञ के लिए ढाक (पलाश),शमी, पीपल, बड़, गूलर ,आम, बिल्व आदि की समिधा का विधान किया है ।चंदन, पलाश, आम की लकड़ी उत्तम मानी गई है। इंग्लैंड में शाह बलूत (ओक), अफगानिस्तान बलूचिस्तान में बादाम की लकड़ी, जर्मन भारत और इटली में सफेदा की लकड़ी यज्ञ समिधा के रूप में प्रयोग होती है। लकड़ी का मुख्य भाग सैलूलोज एवं लिग्नो सैलूलोज होता है। लकड़ी में कुछ गोंद ,राल, वाष्पशील तेल, अमल, वसीय अम्ल एवं अन्य अकार्बनिक पदार्थ होते हैं। बड़, गूलर, पीपल एवं आम की छाल में कम से 9 ,10 ,14 और 3.8% टैनिन होता है। लकड़ी में कार्बन 48.51% ,हाइड्रोजन 6% ,ऑक्सीजन 43%, नाइट्रोजन 0.04 से 0.01% होती है। कोयले में 82%, कार्बन ,5% हाइड्रोजन, ऑक्सीजन 12% और 1% नाइट्रोजन होती है। कोयले में लकड़ी से ज्यादा कार्बन की मात्रा है फिर भी हवन के लिए लड़कियों का ही प्रयोग करना उचित है क्योंकि कोयला जलने से कार्बन मोनोऑक्साइड नामक जहरीली गैस उत्पन्न होती है।

समिधा के रूप में लकड़ियां का प्रयोग औषधिय गुना के आधार पर किया जाता है।(मुख्यतः भाव प्रकाश -2 तथा सुश्रुत- 3,4 के आधार पर निम्नलिखित हैं --

ढाक (पलाश) Butea frondosa-- ढाक सुविधा से जलता है। यह अग्निदीपक, वीर्य वर्धक, गुदा के रोग, संग्रहणी तथा कृमि नाशक है। ढाक के बीजों को शहद मिलाकर आंत के कीड़े निकालने की औषधि बनाई जाती हैं। इसके पत्ते फोड़े फुंसियों को नष्ट करने के लिए भी प्रयोग किए जाते हैं।

पीपल Ficus religoisa ---पीपल को पवित्र माना जाता है यह वर्ण्य अर्थात शरीर की रंगत को निखारने वाला, व्रणरोपण, दाह, कफ ,पित्त विष और रक्त विकार नाशक है। इसके बीजों का चूर्ण स्वास्थ्य में रोगों में लाभदायक है।

बड़ (वट) Ficus bangalensis --यह शीतल भारी और कसैला होता है। यह कफ, पित्त ,वामन एवं ज्वर में लाभकारी एवं कांति वर्धक है।इसका दूध अत्यंत बलवर्धक है ।इसके दूध को बताशे में रखकर सेवन करने से प्रमेय रोग दूर हो जाता है ।

गूलर Ficus glomerata---यह कफ ,पित्त तथा रक्त विकार को ठीक करता है। हड्डी जोड़ने वाला तथा वर्ण को उत्तम करने वाला है।

आम -Mangifera Indica-----कफ पित्त रक्त विकार तथा प्रमेय का नाश करता है। इसकी पत्तों का धुआं काली खांसी को नष्ट करता है ।आम का बौर शीतल एवं रुचिकारक है। यूनानी मत अनुसार आम की छाल रक्तस्राव को बंद करने वाली, वमन और अतिसार नाशक है।

चन्दन Santalum album---सर्वोत्तम चंदन देखने में ऊपर से सफेद, गांठदार ,काटने पर लाल और पीसने पर पीला तथा स्वाद में कड़वा होता है ।यह कफ तृषा, पित्त, रक्त विकार और दहन नाशक है ।हवन में प्रायः इसका चुरा ही प्रयोग किया जाता है। सफेद चंदन के तेल का प्रयोग शुजाक(आतशक) में लाभदायक है

अशोक Saraca Indica---शीतल ,कांति वर्धक, मलरोधक, हड्डी को जोड़ने वाला एवं कृमि नाशक है। शुल ,उदर रोग, पित्त ,श्रम दाह, तृषा, अपच, विष और रक्त विकारों को दूर करता है ।*बसुऔर कीर्तन ने इसकी छाल को कृमि नाशक, तृषा और ज्वर नाशक, अपच को दूर करने वाली,शूल एवं बवासीर में लाभकारी माना है।

अतः यज्ञ में प्रयोग की जाने वाली लकड़ियां अत्यंत गुणकारी हैं। विभिन्न रोगों का नाश करती हैं। लकड़ी जहां जलने पर गर्मी उत्पन्न करती है। वहीं कई लाभदायक पदार्थ भी बनती है।

8. सामग्री:-

शतपथ ब्राह्मण में महाराजा जनक और ऋषि याज्ञवल्क्य संवाद में अग्निहोत्र के लिए शुद्ध पवित्र दूध, दूध से बने पदार्थ एवं औषधीय गुणों से भरपूर वनस्पतियों का प्रयोग माना है।

वेद में यज्ञ सामग्री की चर्चा कई स्थान पर आई है। जैसे-

समिधाग्निं दुवस्यत धृतैर्बोधयतिथिम्। अस्मिन् हव्या जुहोतन।।(यजु.3.1)

समिधाओं से यज्ञ अग्नि प्रज्वलित करके उसे घृत से प्रबुद्ध करो। प्रदीप अग्नि में उत्तमोत्तम हवि की आहुतियां दो।

घृतेन द्यावापृथिवी प्रोर्णुवाथाम्।। (यजुर्वेद 6, 16)

यज्ञ के द्वारा घृत आदि से पृथ्वी को भर दो।

वेद में यजमानों के लिए विधान किया गया है--

यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हुवि। (ऋग्वेद 10,14 ,13)

सोमलता आदि औषधीयों को निचोड़ कर , हवनीय द्रव्यों को अग्नि में डालो।

यमाम मधुमत्तमं राज्ञे हव्यंजुहोतन।। (ऋग्वेद 10,14, 15)

हे यज्ञ करने वालों बहुत मीठे हवन करने योग्य पदार्थ से अग्निहोत्र करो।

ओ३म् त्र्यंबकं यजामहेम सुगंधिम पुष्टिवर्धनम् ।

उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योरमुक्षीय मामृतात्।।(यजुर्वेद 3,60)

इस मंत्र में हविर्द्रव्यों की चार श्रेणियां --सुगंधित, पुष्टि कारक, रोग नाशक तथा मिष्ठा का संकेत हैं।

महर्षि दयानंद ने भी यज्ञ सामग्री के लिए निम्नलिखित चार प्रकार की वस्तुओं का विधान संस्कार विधि में किया हुआ है--

१. सुगंधित-- कस्तूरी, केसर, अगर, तगर ,सफेद चंदन, इलायची, जायफल, जावित्री इत्यादि।

२. पुष्टि कारक- घृत ,दूध, फल, कन्द, अन्न, चावल, गेहूं, उड़द आदि।

3. मिष्ठ--शक्कर, शहद, छुहारे, दाख इत्यादि।

4. रोग नाशक-- सोमलता अर्थात गिलोय आदि औषधीयां।

सभी सामग्री के पदार्थों को यथावत शुद्ध कर लेना चाहिए। इसमें पर्याप्त घी मिलाने से सामग्री का रूखापन एवं तिक्ष्णता दूर होती है।

यज्ञ के लिए विशेष पाक बनाने का विधान भी है, जैसे की सेर भर घी में मोहन भोग में रति भर कस्तूरी ,मासे भर केसर ,दो मासे जायफल ,जावित्री ,सेर भर मीठा सब डालकर मोहन भोग बनता है। इसी प्रकार अन्य मीठा भात खीर ,खिचड़ी (लवण रहित) मोदक आदि होम के लिए बनाएं।

1 किलोग्राम सामान्य यज्ञ सामग्री में साधारणतया निम्नलिखित द्रव्य होने चाहिए --

हर्मल, तुलसी के बीज (1-1 ग्राम), तुलसी के पत्ते 2 ग्राम ,नीम के पत्ते, नीम की निंबोली, कुखूकलां, पिस्ता, जावित्री, जायफल ,चिरौंजी, चीड़ का बुरादा (प्रत्येक 5 ग्राम), शतावर, मुनका, गाजवान, जंडी के पत्ते, पित पापड़ा, पीपल की छाल, आम के पत्ते, सफेदा (यूकेलिप्टस)के पते, सौंफ, कपूर लौंग,चिरायता (प्रत्येक 8 ग्राम), गुलाब ,हरड़ ,बहेड़ा, आंवला, अगर, तगर ,कपूरकचरी, मुलहठी, नागर मोथा ,असगंध, मकोय इंद्र जौ, बड़ी इलायची,तालिसपत्र, गोखरू, किशमिश, दालचीनी ,नागकेसर, पानड़ी

(प्रत्येक 20 ग्राम), बादाम, सफेद चंदन का चूरा ,छुहारा ,जौ, हरे मूंग ,उड़द, चावल ,बालछड़, कचूर, ब्रह्मी, बनफसां,नारियल गिरी (प्रत्येक 30 ग्राम), काले तिल ,गिलोय और गूगल(प्रत्येक 40 ग्राम), सामग्री में घी और खंड पर्याप्त मात्रा में मिलाई जाती है।

स्थान, ऋतु एवं अन्य परिस्थितियों के अनुसार एक सामग्री के पदार्थ तथा उनकी मात्रा में परिवर्तन करना पड़ता है। हवन से वांछित लाभ प्राप्ति के लिए यज्ञ द्रव्यों के गुणों एवं रासायनिक संघटन का ज्ञान आवश्यक है। द्रव्य गुणों का प्राचीन शास्त्रकारों तथा रासायनिक संघटनों का वर्तमान का वैज्ञानिकों ने बड़ा विस्तृत विवेचन किया है। कुछ द्रव्यों के गुण निम्न प्रकार से हैं --

१. कपूर Cinnamomum camphora -- कपूर वृक्ष की लकड़ी एवं पत्ते भाप के साथ आसवन क्रिया पर कपूर तेल बनता है। इस तेल से ही कपूर बनता है। सुश्रुत ने कपूर को शीतल, हल्का, सुगंधित, तृषा तथा अरुचिनाशक माना है। भाव प्रकाश के अनुसार यह वीर्य वर्धक नेत्रों के लिए हितकर कफ,पित,दाह, तृषा,अरुचि एवं दुर्गंध नाशक है। कैंपर तेल में कपूर,युजिनाल, पाइनीन,फेलेण्ड्रीन, सीनिओल, डाइपैन्टीन, सैफ्रेल, टर्पिनिआंल तथा सेस्क्कीटर्पीन होते हैं।

2. घी (घृत) Butyrum depuratum --सुश्रुत (सूत्र स्थान 45,96 -111) घी को अमृत तुल्य गुणकारी,आयु, स्मरणशक्ति, बुद्धि, ओज, तेज ,वीर्य तथा सौंदर्य को बढ़ाने वाला, अग्निदीपक, नेत्रों के लिए हितकारी, ज्वर, पित्त ,उधर शूल, मिर्गी, विष और कृमि नाशक माना है। सांप के डसने पर घी पिलाया जाता है। गो घृत सुहाने से आधे सिर के दर्द में लाभ होता है। घी क्षत को भरता है। शरीर में पित्त या पित्ती रोग उभरने पर गर्म घी पिलाना लाभप्रद है ।अतः अनेकों मरहम आदि में प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेद में गाय का घी सर्वोत्तम माना गया है। घी उच्चतर कार्बोक्सिलिक अम्लों का मिश्रित ट्राइग्लिसराइड है। इसमें मुख्यतः संतृप्त और असंतृप्त अम्ल ओलिक, पामिटिक,स्टिएरिक, मिरिस्टिक अमल आदि हैं।

3. दूध (Lactus) दूध पूर्ण आहार है। गाय का दूध सर्वोत्तम है। धारोष्ण गो दुग्ध अमृत तुल्य है। दूध से वीर्य ,आयु ,बल एवं बुद्धि में वृद्धि होती है ।वह वात, पित्त को समाप्त करता है।श्रम, अतिसार, बवासीर, तपेदिक, पांडु रोग, संग्रहणी, मूत्र रोग ,हृदय शूल, वह मूर्च्छा में लाभदायक है। शरीर ,हाथ, पैर और आंखों की जलन को दूर करता है ।(सुश्रुत सूत्र स्थान 45 ,47 -64) में दूध के गुणों की विस्तृत विवेचना की गई है। गो दूग्ध में 87% पानी, 4.5% दुग्ध शर्करा, 3.9% दुग्ध वसा, 3% केसीन, 0.40% एल्बुमिन तथा 0.7% राख होती है। दुग्ध में विटामिन, अमीनो अम्ल, कई प्रकार के खनिज पदार्थ तथा कुछ धातुएं भी होती हैं । दूध की प्रोटीन सर्वोत्तम है। यह स्वयं 97% तक पच जाती है तथा दूसरे पदार्थ की प्रोटीन को पचाने में भी सहायक है। जैसे केवल गेहूं के खाने से इसकी प्रोटीन 20% पचती है। दुग्ध के साथ गेहूं का प्रयोग करने से इसकी प्रोटीन 60% पच जाती है।

4. शहद (मधु) Mel --- शहर उत्तम गुणकारी शक्ति वर्धक रक्त शोधक है (सुश्रुत अध्याय 45) में मधु को अग्निदीपक, पित्त,कफ प्रमेह,विष ,तृषा, अतिसार को शांत करने वाला माना है। सुश्रुत (सूत्र स्थान 45, 132-146) में शहद के भेद तथा गुणों का विस्तृत वर्णन किया गया है। शुद्ध शहद आंख में डालने से नेत्रों की ज्योति बढ़ती है ।घाव पर लगाने से लाभ होता है। सर्दी के कारण गला बैठ जाए तो दिन में तीन-चार बार एक-एक चम्मच शहद चाटना उत्तम है। के प्रयोग से पेचिश और टाइफाइड के रोगाणु मर जाते हैं।

शहद में लगभग 75% शर्करा (डेक्सट्रोज ,लेवूलोज) 20% पानी तथा 5% अन्य पदार्थ जैसे फूलों के अमल, फूलों के सूक्ष्म कर्ण, सुगंधित उत्पन्न करने वाले तत्व एवं मोम आदि होते हैं।

5. खांड -यह वात , पित्त नाशक, स्निग्ध तथा वामक है। सफेद बूरा हल्का, शीतल और वीर्य वर्धक होता है। मिश्री हलकी पित्त तथा वात नाशक है।

6. दाख (द्राक्षा)Vitis vinifera ---द्राक्षा मीठी, ठंडी, प्यास में लाभदायक, रक्त वर्धक एवं शोधक है इसमें द्राक्ष शर्करा की अधिकता होती है। इसकी रासायनिक संरचना इस प्रकार है--

द्राक्षशर्करा 55.6%, पानी 23%, सैलूलोज 1.9%, एल्बुमिनांइड 2.7%, वसा 0.66%, राल 1.3 % एवं नाइट्रोजन रहित पदार्थ 14.1% होते हैं।

7. अगर (अगुरू) Aquilaria agallocha --अगर को प्राचीन काल में इत्र तथा औषधियां बनाने के लिए प्रयोग किया जाता था। भाव प्रकाश के अनुसार यह गर्म चरपरा, त्वचा के लिए कारक, नेत्र रोग, कर्ण रोग, तथा शीत ,वात, कफ नाशक है। सुश्रुत ने इसको कुष्ठ नाशक और कांतिवर्धक माना है। अगर में एक उड़नशील तेल होता है जो इथर में विलय हो जाता है।अगर में लगभग 1% वसीय अम्ल होता है।

8. तगर(Veleriana wallichii) --तगर का प्रयोग जर्मन, एशिया ,यूनान और एशिया मायनर में सुगंधित मसाले में प्रयोग किया जाता रहा है। यह मिर्गी ,सर दर्द ,नेत्र रोग ,रक्त विकार, विष विकार एवं मूर्च्छा को दूर करता है। यूनानी मत अनुसार गुर्दे के रोग तथा जोड़ों के दर्द में भी लाभदायक है। अनेकों विषैला जीवों एवं सीटों को दूर भागता है। इसकी रासायनिक संरचना इस प्रकार है--14% स्टार्च, 5 से 10% शर्करा, 0.56% वसीय अमल, 13% एलबुमिनांइड , 10% पानी, 10% सैलूलोज, 10 %लिग्निन, 4% गोंद, 3% टैनिन तथा थोड़ी मात्रा में उड़नशील तेल, रेजिन (राल) सिट्रिक अम्ल, टार्टरिक कमल आदि होते हैं।

9. केसर (कुंकुम अग्नि शेखर) Crocus sativus ----केसर का लेप मस्तक पर लगाने से दर्द दूर होता है यह कृमि नाशक ,वमन, खुजली ,पित्त ,चर्म रोग में भी लाभदायक है। इसका रंग alpha, beta, gamma क्रोसेटिन के कारण होता है। इसकी

रासायनिक संरचना इस प्रकार है--15.6% पानी, 13.3% स्टार्च एवं शर्करा, 0.6% वाष्प शील सुगंध तेल, 5.63% अवाष्प शील तेल ,4064% नाइट्रोजन रहित पदार्थ, 4.94 8% तंतु तथा 4.27 प्रतिशत राल होती है।

10. कस्तूरी -यह गर्म, वीर्य वर्धक तथा कफ, वात, विष, वमन और शीत को हारने वाली है। थोड़ी सी कस्तूरी भी लाखों घन फुट वायु को सुगंधित कर देती है और सुगंध लंबे समय तक रहती है।

11. जायफल Myristica fragrance ---यह गर्म, तीक्ष्ण, हल्का ,सुगंधित, रुचिकर ,पौष्टिक, पाचक, स्वर के लिए हितकारी कफ वात , खांसी ,पीनस, मुख की दुर्गंध ,वमन तथा हृदय रोग नाशक है। यूनानियों ने इसे दिल्ली गठिया औरत लगवा में लाभदायक माना है। भाव प्रकाश ने कृमि नाशक माना है। जायफल में 30 से 40% वसा, 5 से 15% वाष्प शील तेल तथा कुछ स्टार्च आदि होते हैं।

12. जावित्री ,(जाति पत्री) Myristica fragrance ---जावित्री रुचिकर, समादिष्ट और सौंदर्यावर्धक है। कफ, खांसी, वामन और तृषा को दूर करती है ।भाव प्रकाश में से कृमि नाशक माना गया है।

13. बड़ी इलायची (दिव्य गंधा व कांता) Amomum subulatum --- यह चरपरी ,हलकी तथा गर्म है। तृषा, विष, वामन, कफ पित्त ,खुजली, दमा, रक्त विकार ,खांसी एवं मूत्र रोग नाशक है।

14**. छोटी इलायची (तीक्ष्ण गंधा) Elletaria cardamomum** --छोटी इलायची चरपरी, शीतल तथा हलकी होती है। इसे धनवंतरी एवं भाव प्रकाश में वमन,कफ, दमा ,खांसी, क्षय और बवासीर नाशक माना गया है।

15. दालचीनी (बहुगंधा व दारू सीता) Cinnamomum zeylanicum यह सुगंधित, पौष्टिक, पाचक एवं कृमि नाशक है खुजली ,अतिसार, वामन अरुचि, वात ,कफ एवं प्यास में लाभदायक है। इसमें एक वाष्प शील तेल मूसिलेज तथा स्टार्च आदि होते हैं। तेल में मुख्यतया सिनेमिक एल्डिहाइड तथा थोड़ी मात्रा में टर्पिन ,पाईनीन, लिनेनांल ,युजिनांल ,फेलेण्ड्रीन आदि होते हैं।

16. लौंग (लवंग) Syzygium aromaticus --- यह चरपरी,कटु,पाचक, नेत्रों के लिए हितकारी, रुचिकारक, खांसी, हिचकी, उधर पीड़ा, वमन,प्यास, कफ, पित्त एवं क्षय रोग नाशक है। इसका तेल दांत एवं दाढ़ शूल में हित कारक है। लौंग की रासायनिक संरचना निम्नलिखित है--पानी 16.4%, नाइट्रोजन युक्त पदार्थ 6%, उड़न शील तेल 17% ,वसा 6.5% ,शर्करा 1.32% ,सेल्यूलोज 10.56% एवं अन्य नाइट्रोजन रहित पदार्थ 37.7% तथा राख 4.5% है। इसके तेल में यूजिनांल तथा टर्पिन होता है।

17**. तालीसपत्र (धात्री पत्र**)Abies webiana यह उष्ण शिक्षक और हल्का होता है वह कफ ,अरुचि ,गुल्म, दमा, क्षय रोग, पित्त, रक्त विकार और मुख रोग नाशक है।

18**. पानड़ी (पाची)**Pogostemon pachiouli -इसके पत्तों की सुगंध से वेस्टन में कीड़ा नहीं लगता है। यह रक्तस्रावरोधक और वायु नाशक है।

19**. नागरमोथा (चक्रांक्षि कला पिनी)** Cyperus rotundus - यह कफ, पित्त, तृषा, दाह, श्रम खांसी, अतिसार, रक्त विकार, अरुचि, ज्वर तथा कृमि नाशक है।

20**. इंद्र जौ (कुटज बीजम)** Holarrbena antidysentrica इंद्रजौ को चरपरा तथा शीतल माना गया है ।ज्वर, अतिसार, वमन, कुष्ठ ,वात पित्त कफ और शूलनाशक है ।इसके बीज गर्म पानी में भिगोए और इस जल के सेवन से पेट के मरोड़े दूर हो जाते हैं। श्वेत कुटबीज तथा छाल ज्वर दूर करने में सिनकोना की तरह काम करते हैं। यूनानी मत अनुसार इसका धुआं बवासीर में लाभदायक है।

21. **कपूरकचरी(गन्धपलासी**)Hedychium spicatum. रासायनिक संरचना --स्टार्च 52.3% ,सैलूलोज 15%, पानी 13.6%, एल्बुमिनांइड तथा कार्बनिक अम्ल 2-4% , ग्लूकोसाइड 1 % ,गोंद 2.8% और राल 4.6% है ।

22. **कचूर (गन्धसारस)** Curcuma zedoaria. रासायनिक संरचना 36% एल्बुमिनांइड, 17.2% स्टार्च, 10.92% तंतु, 10.38% पानी, तथा कुछ सुगंधित तेल और शर्करा होती है।

23. **बालछड़ (जटामांसी)** Nardostachys jatamansi यह पौष्टिक है। रक्त विकार, चर्म रोग, गले तथा सीने के रोगों, खांसी, मूर्छा और अफारे को दूर करती है।नेत्र ज्योति बढ़ती है।बालों को कल करती है।

24. **नागकेसर (नाग पुष्प)** Mesua ferra. यह उष्ण स्वभाव का है। आयुर्वेद के अनुसार यह रक्त विकार, तृषा वात, पित्त, कफ और विष विकार दूर करता है।

25**. चिरौंजी (स्नेहबिजम्**)Buchanania lanzan. रासायनिक संरचना-- वसीय अम्ल 58 से 59% एल्बुमिनांइड, 28% पानी, 5.7%, गोंद 2.7% ,तंतु 2.8% और 3.3% राख होती है।

26. **कुलिंजन (सुगंधा अग्र गन्धा)**Alipinia officinarum.

यह खांसी, कफ, कृमि तथा पित नाशक है। यह मुंह, हृदय और कण्ठ शोधक है। इसकी जड़ में रासायनिक कैम्फालांइड,गैलेन्गिन तथा अलपाइनिन पाए जाते हैं। इसके तेल में मैथिल, सिनीमेट, सीनिओल, कपूर आदि होते हैं।

27. **सुगंधबाला(बाला)**Pavonia odorata. इसकी जड़ पतली मुड़ी हुई साथ से 8 इंच लंबी होती है यह सुगंधी युक्त होती है । पेचिश और दस्त रोकने में लाभदायक है।

28. **आंवला (शीतफल**)Phyllantbus emhlica. यह त्रिफला का प्रधान अंग है। इसमें विटामिन सी की बहुलता होती है यह शीतल, वीर्य, आयु, तेज वर्धक है। यह कफ, पित्त, रक्त शोधक, रुचिकर ,दमा और खांसी नाशक, टूटी हड्डी जोड़ने तथा नेत्र और बालों के लिए लाभदायक है। कच्चा आंवला कसैला होता है। कच्चे आंवले में टैनिक एसिड अधिक होता है। पक्का आंवला स्वादिष्ट फल है। यदि फल की गुठली निकालकर 100 ° सेल्सियस पर सुखाया जाए तो उसकी रासायनिक संरचना निम्नलिखित है--टैनिन शर्करा आदि 36.5% ,सैलूलोज 17.8%, एल्बुमिनांइड 13.08%, गोंद 13.7% , गैलिक अमल आदि 11.32%, खनिज पदार्थ 4.12% ,नमी 3.83%) हैं

29**. बादाम (Preunus amygadalus**.) यह उष्ण, स्निग्ध, बल कारक, वीर्य वर्धक , वात नाशक है ।इसका तेल बुद्धि वर्धक तथा मस्तिष्क विकार नाशक होता है।

30. **गिलोय (अमृत वल्ली)**Tinospora cordifolia. यह कसौली ग्राम हल्की भूख बढ़ाने वाली बाल कारक और आयुवर्धक है। ज्वर, दहा, तृषा ,रक्त दोष, वमन ,पांडु रोग, खांसी ,कोढ़ ,क्रीमी खूनी बवासीर तथा विश्व नाशक है। यह शक्कर के साथ पित्त को, घी के साथ वात को ,सौंठ के साथ आमवात को और शहद के साथ कफ को नष्ट करती है। इसमें बर्बरिन नामक अल्कलॉइड होता है।

31. **नीम** (Azadirachta Indica) नीम का प्रत्येक भाग औषधि के रूप में प्रयुक्त होता है। यह नेत्रों के लिए लाभप्रद ,अरुचि ,विष विकार,कुष्ठ और कृमि नाशक, रक्तशोधक एवं चर्म रोगों को दूर करता है। इसकी पत्तियों में विटामिन ए पर्याप्त मात्रा में होता है। नीम के तेल की मालिश करने से खुजली मिट जाती है। हिलडिच और मूर्ति के अनुसार नीम के तेल में 14.9% पामिटिक अम्ल, 14.4 सिट्रिक अम्ल, 61.9% औलिक अमल, 7.5% लिनोलिक अम्ल, तथा 1.3 प्रतिशत ऐरेचिडिक अम्ल पाया जाता है।

32. **गुगल** (देव धूप वायुध्न)Commiphora mukul. गूगल की धूप देने से नजला, ज्वर, स्वरनाली का प्रदाह, बवासीर एवं क्षय रोग में लाभ होता है। गूगल कृमि नाशक, पाचन शक्ति वर्धक, सूजन, कफ, कुष्ट नाशक, वीर्य वर्धक, टूटी हुई हड्डी को जोड़ने वाला, वात, प्रमेह , पथरी नाशक, रक्त शोधक माना गया है। गुगल तपेदिक नाशक हवन सामग्री में डाला जाता है ।यह क्षत को बहुत शीघ्र भरता है ।अथर्व वेद (19.38.1) में कहा गया है कि जिसे गुगल की सुगंध प्रात है। उसे रोग पीड़ित नहीं करते। न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैनं शपथो अश्नूते। में भेषजस्य गुल्गुलो: सुरभिर्गन्धो अश्नूते।।

33. **नारियल (सदाफल)** Cocus nucifera. कच्चे नारियल का पानी प्यास तथा मूत्र संबंधित रोगों में लाभदायक है। इसकी गिरी शीतल, पौष्टिक ,तृषा, वात, पित्त और रुधिर विकार नाशक है। इसका तेल बालों को स्वस्थ और लंबा करता है। सफेद होने

से रोकता है। नारियल की गिरी में पानी 40.6% ,वसा 36%, नाइट्रोजन युक्त पदार्थ 5.5%, लिग्निन 2.9% , राख 0.6%, अन्य नाइट्रोजन रहित पदार्थ 8.06% है। नारियल तेल में 45% लौरिक अमल, 20% मिरिस्टिक अमल ,10%कैप्रिक अमल, 9% कैप्रिलिक ,7% पामिटिक अमल, 5% स्टिऐरिक अमल 2% ऑन अम्ल एवं 2% कैप्रोइक अमल होते हैं।

34. **तिल** (Sesamum indium) काले तिल सर्वश्रेष्ठ और वीर्य वर्धक होते हैं।सफेद तिल मध्य और लाल तिल गुण हिन माने जाते हैं। तिल चरपरा, उष्ण,कफ,वात ,पित्त नाशक, बुद्धि वर्धक, अग्नि दीपक, त्वचा के लिए उत्तम है। तिल का तेल बाल काले एवं बढ़ाने में सहायक है। तिल का लगभग 50 से 55% भाग वसीय अमल ग्लिसराइड होता है । तील के तेल में विभिन्न ग्लिसराइडों की प्रतिशत मात्रा निम्नलिखित है ।ओलिक ग्लिसराइड 48.1%, लिनोलिक ग्लिसराइड 36.8%,पामिटिक ग्लिसराइड 7.7%, सिट्रिक ग्लिसराइड 4.6%,ऐराकिडिक ग्लिसराइड 0.4%, लिग्नओसेरिक ग्लिसराइड 0.04%.

35. अन्न में ऋत्वनुसार खाद्यान्न डालने का विधान भी शास्त्रों उक्त है। इसमें चावल, उड़द,जौ आदि प्रमुख हैं।जौ कान्ति वर्धक , गले तथा चरम संबंधी रोग कफ, पित्त, खांसी ,दमा एवं तृषा नाशक माना गया है। उड़द बलकारक, वीर्यवर्द्धक, दमा, श्रम, बवासीर और मलभेदक है।(खाद्यान्नों की प्रतिशत संरचना निम्नलिखित हैं-

अनाज/दाल	स्टार्च (%)	पानी (%)	ऐलबूमिनाइड (%)	वसा (%)	तन्तु (%)	राख (%)
गेंहू	78.3	12.8	-	0.6	0.4	0.6
चावल	68.4	12.5	13.5	1.2	2.7	1.7
जौ	70.0	12.5	11.5	1.3	2.6	2.1
चना	53.6	12.5	19.5	4.6	7.8	3.1
हरे मूंग	54.1	10.8	22.2	2.7	5.8	4.4
उड़द	55.8	10.1	22.7	4.8	4.4	4.8

(A.H.Church,Food-Grain of India, Chapman and Hall, London -1886). इस प्रकार इस प्रकार यज्ञ सामग्री में डाले जाने वाले वस्तुएं अत्यधिक उपयोगी हैं । इन के द्वारा रोगों का नाश तथा बाल की वृद्धि होती।

दहन क्रिया

द्रव्यों के अविनाश नियम (Law of conservation of mass) के अनुसार किसी भी रासायनिक प्रक्रिया में भाग लेने वाले पदार्थ के भार का योग अपरिवर्तित रहता है। अग्नि में आहुति देने से पदार्थ सूक्ष्म एवं हल्का होकर तीव्र गति से फैल जाता

है। उसकी भेदक शक्ति बढ़ जाती है। यह तथ्य ग्राहम के व्यापनशीलता (Grahm's diffusion of gases) नियम का आधार है।इस नियम के अनुसार " *निश्चित ताप और दबाव पर गैसों की व्यापन गतियां उनके घनत्व के वर्गमूल की विपरीत अनुपाती होती हैं "।

स्वाहाकृतेऊर्ध्वनभसं मारुति गच्छतम्। (यजुर्वेद 6, 16)

यज्ञ में स्वाहा पूर्वक आहुति देने से वायु ऊपर आकाश में जावे। महर्षि दयानंद ने लिखा है अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म होकर फैल कर वायु के साथ दूर देश में जाकर दुर्गंध की निवृत्ति करता है। सुगंधित पदार्थ का फैलने का वह सामर्थ्य नहीं है, अग्नि द्वारा किया जाता है।

हवन में किन-किन रासायनिक परिवर्तनों के द्वारा क्या-क्या पदार्थ उत्पन्न होते हैं। यह निश्चय करना एक कठिन विषय है, क्योंकि-

(क) यज्ञ कुंड में सर्वदा तापांश सम्मान नहीं रहता, तापमान भिन्नता के कारण एक ही द्रव्य भिन्न-भिन्न पदार्थ बन सकता है।

(ख) रासायनिक क्रिया पूर्ण होने से पूर्व ही जो पदार्थ बने हैं, वे आपस में मिलकर कोई अन्य पदार्थ बना ले या उड़कर वायु में मिल जाए।

(ग) प्रत्येक पदार्थ का ऑक्सीकरण सदा पूर्ण हो जाए यह भी संभव नहीं है, क्योंकि वायु की मात्रा घटती और बढ़ती रहती है।

यज्ञ के द्वारा उत्पन्न होने वाले पदार्थ का अनुमान ही लगाया जा सकता है। यह निश्चित करना कठिन है, कि कितनी सामग्री डालने से कौन सा पदार्थ कितनी मात्रा में उत्पन्न होगा।

हवन में डाले गए पदार्थों के दहन क्रिया पर उत्पन्न होने वाली गैसों का विश्लेषण निम्नलिखित हैं ---

1. कपूर--यज्ञाग्नि कपूर को जलाकर प्रज्वलित की जाती है। इसके जलने से धुआं उत्पन्न होता है, और कुछ भाग रासायनिक परिवर्तन के साथ उड़कर वायुमंडल में उत्तम सुगंध पैदा करता है। शेष कपूर के भाग से तेल बन जाता है जिसमें पाइनीन,डाइपैण्टीन,सीनिओल,युजीनांल,सैफ्रोल और टर्पिनिआंल इत्यादि है।

2. लकड़ी -यज्ञ में जो द्रव्य डाले जाते हैं, उनका 75% भाग लकड़ी होती है। मुख्य उद्देश्य अग्नि प्रज्वलित रखना है। अतः इसके जलने से 500 डिग्री सेल्सियस तापमान हो जाता है। लकड़ी के मुख्य भाग सेलुलोस तथा लिग्नो सेलुलोस में लगभग 27.62% हाइड्रोजन, 28.57% कार्बन तथा 23.81% ऑक्सीजन होती है। लकड़ी के जलने से सेलुलोस एवं लिग्नो सेलूलोस के ऑक्सीकृत होने से हाइड्रोकार्बन बनते हैं ,जो 400 से 600 डिग्री सेल्सियस के बीच जलकर कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी बनाते हैं।

1**. (C6 H10 O5)n + 6n 02------>6n CO2 + 5n H2O .**

यदि यज्ञ कुंड में वायु के कम प्रवेश होने पर कार्बन मोनोऑक्साइड कार्बन की कार्बन की धुल बनती है।

2. **(C6 H10 O5)n +3n O3------>6n CO + 5n H2O.**

3.**(C6 H10 O5)n -----> 6nC + 5nH2O** .

यज्ञ वेदी खुले स्थान पर होने से वायु उचित मात्रा में आती रहती है। इसीलिए कार्बन मोनोऑक्साइड विषैली गैस नहीं बनती है। कार्बन धूली वर्षा लाने में सहायक है।

यज्ञ कुंड की बनावट समिधाओं की लंबाई तथा उसके रखने की विधि तापांश और वायु की ऐसी मात्रा तय करती है कि हवन के समय लकड़ी की आसवन क्रिया लगभग पूर्ण होने की संभावना है । दहन क्रिया में अनेकों पदार्थ उत्पन्न होते हैं ।ये उच्च तापमान पर कई अन्य पदार्थ बना लेते हैं। इस प्रकार समस्त क्रिया पेचीदा बन जाती है, और उत्पन्न गैसों का सही अनुमान लगाना कठिन हो जाता है।हवन में तो यह कार्य और भी कठिन है ,क्योंकि वायु और गर्मी की मात्रा घटती बढ़ती रहती है, जिससे परिस्थितियों भी निश्चित नहीं रह पाती।

हाले और पामर के अनुसार आसमान क्रिया के आरंभ होते ही लकड़ी सुखना आरंभ कर देती है। इस समय अधिक मात्रा में पानी तथा थोड़ा सा एसिटिक एसिड और मेथेनॉल भी बनता है ।उसके पश्चात कई गैस उत्पन्न होती रहती हैं।

पश्चात वैज्ञानिक बुग ने लकड़ी की दहन क्रिया के संबंध में व्यापक अन्वेषण किया। उसने हवन से उत्पन्न होने वाले 100 से अधिक पदार्थ की पहचान की है। दहन क्रिया में कई हाइड्रोकार्बन जैसे (मेथेन, बेंजीन आदि), एल्डिहाइड (फोर्मेल्डीहाइड, एसीट ऐल्डिहाइड, फरफ्यूरल, प्रोपिओन एल्डिहाइड आदि), कीटोन (एसीटोन ,मिथाइल इथाइल कीटोन आदि),अमल (फार्मिक अम्ल, एसिटिक अम्ल, प्रोपिआंनिक अम्ल एवं नॉर्मल कैप्रोइक अमल आदि),अल्कोहल (मिथाइल अल्कोहल, एथाइल अल्कोहल आदि), फिनोल ,कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी उत्पन्न होते हैं। हवन में दहन क्रिया से कौन सा पदार्थ कितनी मात्रा में उत्पन्न होता है, यह लकड़ी की बनावट के आधार ,तापांश, दूसरे पदार्थ की विद्यमानता आदि पर निर्भर करता है। उत्पन्न द्रव्यों में

अल्कोहल तथा कार्बनिक अम्ल मिलने से एस्टर बनता हैं। पूर्वोक्त पदार्थ किन-किन रासायनिक परिवर्तनों के कारण बनते हैं। यह अनुमान लगाना कठिन है, परंतु कलेसन के विचार अनुसार आसवन क्रिया के समय जो एसिटिक एसिड बनता है, वही टूटकर एसीटोन बना देता है तथा अन्य कीटोंस भी इसी प्रकार अपनी संगत के अम्लों से उत्पन्न होते हैं ।

4. **2 CH3COOH------->CH3 CO CH3 + CO2 + H2O.**

कुछ वैज्ञानिकों ने यहां पर हाइड्रोजन गैस भी उत्पन्न मानी है।

हाइड्रोकार्बन प्रतिक्रिया स्वरूप कई पदार्थ बनाते हैं, जैसे मेथेन से एसिटिलीन तथा हाइड्रोजन आदि बन सकते हैं।

5. **$2CH_4$------> $C_2H_2 + 3H_2$** .

यह हाइड्रोजन अन्य पदार्थों के साथ मिलकर नए पदार्थ बना सकती है और वायु में मिल सकती है।

राल युक्त लकड़ी के जलने एवं आसवित होने पर फोरमलडीहाइड की उत्पत्ति होती है। कुछ मात्रा में टर्पिनिऑल, टर्पिन, सीनिओयल तथा अन्य उड़नशील पदार्थ भी बनते हैं। लकड़ी के जलने पर राख की मात्रा 0.2% से 4% तक होती है। साधारणतः राख 1% से कम ही बनती है। राख में मुख्यत: कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम तथा थोड़ी मात्रा में एल्यूमिनियम, लोहा, मैगनीज, सोडियम, फास्फोरस तथा गंधक इत्यादि होते हैं और इसका खाद में प्रयोग किया जाता है।

घृत –

कपूर द्वारा अग्नि प्रज्वलित कर समिधाओं पर घृत की आहुतियां देनी प्रारंभ की जाती हैं। घी अग्नि को प्रज्वलित रखता है। दहन क्रिया में घी से अनेकों प्रकार के लाभदायक पदार्थ उत्पन्न होते हैं। इसलिए शास्त्रों में शुद्ध गोघृत का विधान है।

डॉक्टर कुंदन लाल अग्निहोत्र एम.डी. ने इस पर कार्य किया है। उन्होंने टी.बी. सेनेटोरियम जबलपुर में तपेदिक के रोगियों की यज्ञ द्वारा चिकित्सा करने का प्रयास किया। उनके अनुसार गाय के घी से यज्ञ करने पर रोगी शीघ्र ही ठीक हुए, भैंस के घी में बहुत देर में लाभ हुआ , परंतु वनस्पति घी के प्रयोग से रोग बढ़ता गया है। अतः वैज्ञानिकों ने शास्त्रों में यज्ञ के लिए गाय के घी का प्रयोग करने का विधान उचित माना है।

घी ग्लिसराॅल और कार्बोक्सिलिक अम्ल के मिश्रण से बनता है। घी में अनेकों प्रकार के अम्ल पाए जाते हैं। घी के जलने से वहीं पदार्थ उत्पन्न होते हैं जो गैलिसरोल तथा अम्लों के दहन से उत्पन्न होते हैं।

ग्लिसरॉल -

ग्लिसरॉल के जलने से कुछ जल हरण तथा ऑक्सीकरण होने से फार्मेल्डीहाइड की उत्पत्ति होती है। क्योंकि ग्लिसरीन के परमाणु में से पानी निकलने पर एक्रोलीन बन जाती है जो ऑक्सीकृत हो जाने पर फॉर्मलीन बना देती है।

(6).$HOCH_2CH(OH)CH_2OH - H_2O$ ------> $H_2C=CHO + O_2$ ------> $2CO_2 + HCHO + H_2O$. (7)

डॉ फीनार के अनुसार ग्लिसरीन के ऑक्सीकरण पर कई पदार्थ ग्लिसर एल्डिहाइड, ग्लीसरिक अमल, टार्टरोनिक अमल ,मीसोऑक्सैलिक अम्ल बनते हैं।

8. HOCH2CH(OH)CH2OH + O2 -------> HOCH2CH(OH)CHO (galyceraldehyde) +O2 -------
>HOCH2CH(OH)COOH (galyceric acid)----->HOCH(COOH)2 (tartonic acid)------> O=C(COOH)2 (meso oxalic acid).

9. HOCH2 CH(OH) CH2OH + O2 --------> HOCH2COCHO (hydroxy pyruvic aldehyde) +O2 ------> HOCH2COCHO (hydroxy pyruvic acid) -CO2 --------> HOCH2CHO (glycol aldehyde) +O2 -------> OHC-CHO (glyoxal) + O2 --------> HOOC-COOH(oxalic acid)+O2 -------> 2CO2 + H2O .

इस प्रकार कई पदार्थ बनने की संभावना है। मुख्यतः रासायनिक परिवर्तन वायु की मात्रा तथा तापमान आदि पर भी निर्भर करते हैं।

अम्ल

गणित में संतृप्त और असंतृप्त दोनों प्रकार के अमल होते हैं। ऑक्सीकरण के समय संतृप्त वसीय अम्लों के परमाणु टूटकर कुछ एल्डिहाइड बना देते हैं ।यह एल्डिहाइड ऑक्सीजन के साथ मिलकर अम्ल में बदल जाते हैं। इन अम्लों से हाइड्रोकार्बन्स की उत्पत्ति होती है । उदाहरणार्थ घी में 30 से 40% ओलिक अम्ल होता है। इसके ऑक्सीकरण पर साधारण ना ॅनिलिक एल्डिहाइड बनता है ।

10. CH3(CH2)7CH=CH(CH2)7COOH + O2-------> CH3(CH2)7CHO + OHC (CH2)7COOH

ना ॅनिलिक एल्डिहाइड से नानेनोइक अम्ल और ओक्टेन बनते हैं ।

11. CH3 (CH2)7 CHO + O2----->CH3 (CH2)7 COOH (nonanoic acid) - CO2 -----> CH3 (CH2)6 CH3 (octane).

ओलिक अमल से उत्पन्न दूसरे पदार्थ से नॉर्मल ऑक्टिलिक एल्डिहाइड ,आक्टेनोइन अम्ल एवं हेप्टेन बनती है।

12. OHC (CH2)7 COOH nonanoic - CO2 ----------> OHC(CH2)6 CH3 (n octalic aldehyde) + O2 --
------>HOOC-(CH2)6- CH3 (octanoic acid) -CO2 ----------> CH3 -(CH2)5- CH3 (heptane)

इसी प्रकार लिनोलिक अमल से कैप्रोनिक एल्डिहाइड तथा वैलेरिक एल्डिहाइड बनते हैं।

घृत के संतृप्त वसीय अमल भाप के साथ मिलकर साधारण छोटे अमल उत्पन्न करते हैं। यही अमल हाइड्रोकार्बन में परिवर्तित हो जाते हैं। उदाहरणार्थ ---ब्यूटीरिक अमल से सर्वप्रथम मेथेन और हाइड्रोक्सी प्रोपेनोऑनिक अमल बनता है।

13. CH3-(CH2)2-COOH + H2O ------> CH4 + HO-CH2-CH-COOH [beta eta hydro oxy propionic acid]

14. HO-CH2 -CH2-COOH - H2O ------> CH2=CH-COOH (acrylic acid) --------> CH2 =CH2 +CO2

इस तरह सेअनेक पदार्थ की उत्पत्ति संभव है।

15. CH3-(CH2)14 COOH (palmitic acid) + 4H2O (steem) ----------> C2H6 + 2HO-(CH2)4-OH + C4H10 + CH3-COOH ----------> 2CH=CH -CH=CH2 (buta dien).

अम्लों की दहन क्रिया पूर्ण होने पर कार्बन डाइऑक्साइड और पानी बनता है।

ऊपर लिखित यज्ञ की सभी क्रियाएं पूर्ण होना आवश्यक नहीं है। कई बार पदार्थ ऑक्सीकरण से पहले ही हवा में मिल जाते हैं। **उदाहरणार्थ** --घी को अग्नि में जलाने से सुगंध उत्पन्न होती है। अतः यहां पर ऑक्सीकरण पूर्ण नहीं हुआ, वरना गंध रहित कार्बन डाइऑक्साइड गैस उत्पन्न होती। घी के जलने से सुगंधित पदार्थ कैप्रोनिक एल्डिहाइड, साधारण ऑक्टोलिक एल्डिहाइड , नॉनलिक एल्डिहाइड, वैलेरिक एल्डिहाइड तथा कई उड़नशील एल्डिहाइड एवं वाष्पशील वसीय अम्ल होते हैं ,जो वायु में मिलकर सर्वत्र सुगंध फैलाते हैं। अग्निहोत्र में घी के कण जो बिना जले ही वायु में उड़ जाते हैं, वे अति सूक्ष्म होते हैं। यही कण अन्य यज्ञीय गैसों के साथ वायु मंडल में प्रवेश कर,अधिक समय तक पर्यावरण को पवित्र रखते हैं। घी के यही कण वर्षा लाने के लिए धूलि कणों का कार्य भी करते हैं। घी की आहुतियां देने से जो पदार्थ उत्पन्न होते हैं ,उनमें हाइड्रोकार्बन की मात्रा पर्याप्त है। ये हाइड्रोकार्बन 450 से 500 डिग्री तापमान पर ऑक्सीजन में मिलकर के अन्य पदार्थ बना लेते हैं।

व्हीलर तथा ब्लेयरके अनुसार मेथेन ऑक्सीकरण पर मिथाइल अल्कोहल तथा फॉर्मलीन बनती है।

16. CH4 + O2 (450-550°C) ------->CH3OH + O2 -------> HCHO (formaldehyde).

फॉर्मलीन के ऑक्सीकृत होने की संभावना बहुत कम होती है।

हवय सामग्री

अग्नि तीव्र प्रज्वलित होने पर सामग्री की आहुतियां दी जाती हैं। सामग्री के द्रव्य जलने पर विभिन्न प्रकार के पदार्थ बनते हैं जिसमें अन्वेषण की अधिक आवश्यकता है।

नागर मोथा, जटामांसी, कपूर कचरी, सफेद चंदन का चूरा और अगर आदि लकड़ी की भांति जलकर शेष क्रियाओं के पूर्ण होने के लिए गर्मी भी उत्पन्न करते हैं। तिल ,चिरौंजी ,नारियल, लौंग, जौ, गेहूं, चावल इत्यादि में ग्लिसरा◌ॉल, वसीयअम्ल, इलेइडिक, सिट्रिक अम्ल इत्यादि अनेकों अम्ल होते हैं। इनके जलने से पूर्वोक्त पदार्थ वैसे ही बनते हैं जिनकी उत्पत्ति ग्लिसरोल

और वसीय अम्लों के ऑक्सीकरण से होती है। यज्ञ सामग्री की वस्तुओं में कार्बोहाइड्रेट् भी विद्यमान होते हैं। कार्बोहाइड्रेट के दो घटक शर्करा एवं स्टार्च हैं। महर्षि दयानंद ने यज्ञ में शर्करा और स्टार्च वाले द्रव्यों के प्रयोग करने का विधान किया है। यज्ञ में पर्याप्त मात्रा में सामग्री के साथ शहद, दुग्ध ,तगर लौंग, दाग, छुहारे, नरकचूर आदि भी डाले जाते हैं। शर्करा वाले द्रव्य में खाॅड मुख्य है। इनके जलने से स्वास्थ्य के लिए लाभकारी गैस से उत्पन्न होती हैं फ्रांस के वैज्ञानिक टिलवर्ट ने अपने शोध में पाया कि खांड में तेजी से जलने पर फॉर्मलीन गैस उत्पन्न होती है । यह कृमि नाशक और वायु को मनुष्य उपयोगी बना देती है। खांड को वैज्ञानिक भाषा में सुक्रोज कहते हैं। सुक्रोज को 210°C पर गर्म करने से पानी उड़ने से एक कार्मल नामक पदार्थ बन जाता है। अधिक गर्म करने पर कार्बन डाइऑक्साइड, कार्बन मोनोऑक्साइड, मेथेन ,एथिलीन, एसिटिलीन, एसीटोन, फार्मिक अम्ल, एथेनॉल ,एक्रोलीन आदि उत्पन्न होते हैं। मीठे फल एवं शहर में ग्लूकोज और फ्रुक्टोज होती है। इनके ऑक्सीकरण पर भिन्न-भिन्न पदार्थ बनते हैं। दूध में लैक्टोज होता है जिसके ऑक्सीकरण से सैकेरिक अम्ल बनता है।

17. **OHC-(CHOH)4 CH3OH + O2 ---------> HOOC-(CHOH)4-CH2OH (gluconic acid)--------->HOHC(COOH)4COOH (glucosaccharic acid) --------->HO-CH(COOH) 2 (tartonic acid).**

अग्निहोत्र की सामग्री में कस्तूरी, केसर, अगर,,तगर,कपूरकचरी, गन्धपलासी,मलहठी,श्वेत चंदन, जायफल, जावित्री, बालछड़, जटामांसी, कपूर , दालचीनी, नीम, नागकेसर,पानड़ी, तुलसी इलायची, एवं अन्य औषधिय, सुगंधित, पौष्टिक पदार्थों को यज्ञ कुंड की प्रज्वलित अग्नि में 200 से 400°C तापमान पर डालने से वायु सुगंधित एवं पवित्र हो जाती है। यज्ञ से उत्पन्न धूंआ और भाप सुगंधित पदार्थों को बहुत दूर तक फैला देती हैं। आहुति देने के बाद भी पदार्थ का उपयोगी भाग जौकत क्यों बना रहता है वह केवल सूक्ष्म हो जाते हैं और सूक्ष्म आकर उन्हें वायु में मिलने और पालन एवं सुविधा प्रदान करता है उड़ने वाले तेलों के परमाणुओं का व्यास लगभग 1×10 की पावर -2 से 1×10 की पावर - 7 मिली मीटर होता है। ये परमाणु श्वास के द्वारा रोगी के फेफड़ों में पहुंचकर क्षत को भर देते हैं। संस्कार विधि में महर्षि दयानंद ने

योग्य रीती से यथाविधि अनुसार हवन करने का विधान में लिखा है। हवन में वैदिक मत्रों के उच्चारण में स्वाह के साथ घी - सामग्री का थोडे-2 अंतराल पर थोड़ी-थोड़ी मात्रा छह-छह मासे डालने का विधान है। हवन की प्रतिक्रिया के अनुरूप वैदिक मंत्रों का उच्चारण करने से वेद की रक्षा और समय का सदुपयोग भी होता है। यज्ञ को धार्मिक एवं श्रृद्धा भावन से करने पर मन में श्रेष्ठ भाव विचारों से मस्तिष्क,आत्मा और शरीर पवित्र होता है।

प्रकाश संश्लेषण

हवन में सूर्य की किरणों का अहम योगदान है। महर्षि दयानंद सरस्वती ने लिखा है," सूर्योदय के पश्चात और सूर्यास्त के पूर्व अग्निहोत्र करने का समय है। सूर्य का प्रकाश यज्ञशाला में यज्ञवेदी क्षेत्र में अवश्य पहुचना चाहिए। यज्ञ के समय उत्पन्न हुए पदार्थ में सूर्य की प्रकाश किरणों के प्रभाव से कई प्रकार के रासायनिक परिवर्तन होते हैं। कुछ एल्डिहाइड और अल्कोहल ऑक्सीकृत हो जाते हैं। हाइड्रोकार्बन तथा फिनोल का बहुलीकरण हो जाना संभव है ।पराबैंगनी प्रकाश में कुछ कार्बन डाइऑक्साइड पानी के साथ मिलकर फॉर्मलीन बना देती है

18. $CO_2 + H_2O + uv$ --------->$HCHO + O_2$

फॉर्मलीन अन्य कई परिवर्तनों के द्वारा भी बनती है। उदाहरण स्वरुप एसिटिक अम्ल, ग्लिसरोल, एसीटोन आदि भी हवन से उत्पन्न होते हैं।

धर और आत्माराम के अनुसार वायु और सूर्य के प्रकाश की विद्यमानता में फोरमलडायहड में बदल जाना संभव मानते हैं।

19. CH_3-COOH + HOH -----------> C ooh3COOH + HCHO (formaldehyde).

20. CH_3OH + O+ heat + Pt -------> HCHO (formaldehyde).

पाइरुविक अम्ल, ऑक्सैलिक अम्ल, ग्लूकोस, प्रोपिऑनिक अमल ,खांड, स्टार्च ,स्टिऐरिक अमल भी सूर्य के प्रकाश में थोड़ी मात्रा में फार्मेल्डीहाइड बनाते हैं। संभवत: ये पदार्थ सर्वप्रथम ऑक्सीकरण के कारण फॉर्मल्डीहाइड में परिवर्तित हो जाते हैं।

सूर्य के प्रकाश में प्रकाश संश्लेषण होता है। रात के समय वायु में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा 12% बढ़ जाती है। पौधे धूप की विद्यमानता में क्लोरोफिल की सहायता से कार्बन डाइऑक्साइड को कार्बोहाइड्रेट में बदलते हैं। इसी क्रिया को प्रकाश संश्लेषण कहते हैं। वनस्पति जगत प्रतिवर्ष 60 * 10 की पावर 12 किलोग्राम कार्बन डाइऑक्साइड को निज भोजन में परिवर्तित कर रहा है। भूमि पर पड़ने वाली प्रकाश की सूर्य की शक्ति का 1×10 की पावर -4 भाग केवल इस क्रिया में व्यय हो रहा है। मैक्समोव का निष्कर्ष है कि खाद की गर्म तह से आच्छादित पौधों की तेज वृद्धि केवल अधिक तापमान के कारण नहीं अपितु कार्बन डाइऑक्साइड की अधिक मात्रा के कारण भी होती है।

सूर्य का प्रकाश मनुष्य के लिए लाभदायक है इससे शरीर में विटामिन डी बनता है और मांसपेशियां और हड्डी पुष्ट होते हैं सूर्य उदय और अस्त होने वाली करने तो और भी अधिक गुणकारी होती है।

उद्यन्नादित्य:क्रिमीहन्तु निम्रोचनहन्तु रश्मिभि:।

ये अन्त: क्रिमयो गवि। अथर्ववेद (2,32,1)

उदय होता हुआ और अस्त होने वाला सूर्य अपनी करने से भूमि और शरीर में रहने वाले रोगजनक कीटों का नाश करता है। सूर्य का प्रकाश कृमि नाशक है। रॉबर्ट कोच ने 1890 में अनेक प्रयोगों द्वारा सिद्ध किया था कि क्षय रोग (फेफड़ों के अक्षरों को छोड़कर) के कीटाणु इस प्रकाश में 10 मिनट तक जीवित नहीं रह सकते। इसलिए क्षय रोगी को धूप सेकनी चाहिए।

पर्यावरण एवं आरोग्यता आज अन्न,जल, वायु, मिट्टी... सब कुछ प्रदूषित हो गया है। संपूर्ण विश्व पर्यावरण प्रदूषण से प्रभावित एवं चिंतित है। इसलिए ईश्वर की महान प्राकृतिक व्यवस्था में यज्ञ द्वारा वायु की दुर्गंध नष्ट होकर सुगंध फैलती है।

वेद यज्ञ को वायु की शुद्धि का हेतु मानता है--

वसो: पवित्रमसि शतधारं वसो: पवित्रमसि सहसत्रधारम् । यजुर्वेद 1,3

यज्ञ असंख्यात संसार एवं अन्य प्रकार के ब्रह्मांड को धारण करने वाला तथा शुद्ध करने वाला कर्म है।

मनु स्मृति (2,103) ने यज्ञ न करने वाले को दंड का भागी माना है।

यजुर्वेद में यज्ञ करने का स्पष्ट आदेश है -

वसो: पवित्रमसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो घर्मोऽसि विश्वधाऽसि।

परमेण धाम्ना दृहस्व मा ह्वर्मा ते यज्ञपतिर्ह्वर्षीत्।। यजुर्वेद (1,2)

महर्षि दयानंद ने अनुवाद करते हुए देखा है कि,"है विद्या युक्त मनुष्य। तू जो यज्ञ शुद्ध का हेतु है, जो विज्ञान के प्रकाश का हेतु और सूर्य की करने में स्थिर होने वाला है, जो वायु के साथ देश देशांतर में फैलने वाला है, जो वायु को शुद्ध करने वाला है, जो संसार को धारण करने वाला है तथा जो उत्तम स्थान से सुख का बढ़ाने वाला है ,इस यज्ञ का मत त्याग कर, तेरे यज्ञ की रक्षा करने वाला यज्ञ मान भी उसे न त्यागे"।

ऋषि दयानंद सरस्वती ने यज्ञ को वायु शुद्ध का सर्वोत्तम साधन माना है इसलिए यजुर्वेद भाषा में ऋषि लिखते हैं ,"जैसी यज्ञ के अनुष्ठान से वायु और वृष्टि जल की उत्तम शुद्ध और पुष्टि होती है, वैसी दूसरे उपाय से कभी नहीं हो सकती"।

ऋषि दयानंद सरस्वती ने 20 जुलाई, 1875 को पुणे में सातवें प्रवचन में कहा था --

"पुष्टि- वर्धन, सुगंध -प्रसार और नैरोग्य ये तीन उपयोग होम अर्थात हवन करने से होते हैं "।

"सुवृष्टि और वायु शुद्धि होम से होती है ,इसलिए हवन करना चाहिए"।

"पहले आर्य लोगों का ऐसा सामाजिक नियम था कि प्रत्येक पुरुष प्रातः काल स्नान के बाद आहुति देता था, क्योंकि प्रातः काल में जो मल मूत्र आदि की दुर्गंध उत्पन्न होती थी, वह प्रातः काल के हवन से दूर हो जाती थी। इसी तरह सांयकाल में हवन करने से दिन भर की दुर्गंध समाप्त होकर रात भर वायुमंडल निर्मल और शुद्ध चलती थी"।

"वर्तमान में हवन के कम होने से बारंबार वायु बिगड़ रही है, सदा विलक्षण रोग उत्पन्न हो जाते हैं"।

भौतिक विज्ञान भी ऋषि दयानंद के इन विचारों का समर्थन करता है। हवन से कई वाष्पीय तेल तथा उत्तम गैस में पैदा होती हैं। ये वायु के साथ मिलकर सर्वत्र मालीनता को नष्ट कर सुगंध फैला देती हैं। यज्ञ न केवल वायु की दुर्गंध नष्ट करता है ,अपितु इस शुद्ध कर रोगों से भी रक्षा करता है। महर्षि दयानंद का यह विचार पूर्ण कर सत्य है कि, "दुर्गंध युक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुख और सुगंधित वायु तथा जल से आरोग्य और रोग नष्ट होने से सुख प्राप्त होता है ।ऋषि आगे लिखते हैं ,कि जब तक हम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगों से रहित सुखों से पूरित था, अब प्रचार हो तो वैसा ही हो जाए अतः प्राचीन आर्य लोग अग्निहोत्र द्वारा वायु शुद्ध तथा आरोग्य प्राप्त करते थे।

भारतवर्ष में प्रत्येक कार्य करने से पूर्व हवन किया जाता है। ऋतु परिवर्तन के समय बृहद यज्ञ का प्राचीन काल से प्रचलन रहा है। ऋतु संधि काल में अनेकों रोग उत्पन्न होते हैं ,और इन व्याधियों का निवारण के लिए भैषज्य यज्ञों के द्वारा होता है। शतपथ ब्राह्मण में इसकी पुष्टि की गई है---

भैषज्ययज्ञा वा एते।

ऋतु संधिषु व्याधिर्जायते तस्मादृतुसन्धिषु प्रयुज्यन्ते।।

" ये भैषज्य यज्ञ कहलाते हैं। ऋतु संधि में ज्यादा व्याधियां उत्पन्न होती हैं ।इसलिए इनका प्रयोग ऋतु संधि में होता है ।भारतीय घरों में नया अग्न अग्नि में अर्पित बिना प्रयोग नहीं किया जाता। इसलिए प्रत्येक ऋतू में ऋतु के पदार्थों द्वारा यज्ञ की प्रथा रही है। संभवत विशेष मौसम उत्पन्न होने वाले पदार्थ उस ऋतु संधि के रोगों को दूर करने के लिए उपयोगी हैं । इस प्रकार के यज्ञों की चर्चा भावना प्रकाश (कृतान्न वर्ग 178)में भी की गई है ---

अर्द्धपक्वै: शमीधान्यैस्तृणभृष्टैश्च होलक:। होलकोऽल्पानिलो मेद: कफदोष श्रमापह:।।

भवेदथो होलको यस्य से तत्तद् गुणो भवेत्।

अर्थात तिनको की अग्नि में भूने हुए अधपके शमी धान्य (फली वाले अन्न) को होला कहते हैं। होलक स्वल्प वात है, और चर्बी कफ तथा थकान के दोषों का शमन करता है ।जिस जिस अन्न आ होला होता है, उसमें उसी उसी अन्न का गुण होता है। हवन के द्वारा रोगों का नाश किया जाना संभव है यह रोग किस प्रकार उत्पन्न होते हैं, अग्निहोत्र कैसे इनको नष्ट करता है। यह विचारणीय है।

वेद यज्ञ द्वारा कृमियों का नष्ट हो जाना संभव मानता है।

शर्मास्यवधूतॅरक्षोऽअरातयोऽदित्यास्त्वगसि प्रति त्वादितिर्वेत्तु। यजुर्वेद (1, 19)

कई रोगाणुओं के नाम भी इस बात का प्रमाण है कि उनका नाश यज्ञ द्वारा हो सकता है। उदाहरणार्थ - यज्ञघ्न रोग कीटों की एकता जाती है तथा यज्ञघ्न का शाब्दिक अर्थ है वे रोग कीट जिनकी यज्ञ से मृत्यु हो जाए।

हवन सुर्य के प्रकाश में किया जाता है। सूर्य की किरणें तथा सुनहरी यज्ञ अग्नि दोनों कर्मी नाशक हैं। रोग किट अधिक गर्मी में जीवित नहीं रह सकते हैं।

ओते मे द्यावापृथिवी ओता देवी सरस्वती।

ओतौ म इन्द्रश्चाग्निश्च क्रिमिं जम्भयतामिति।। अथर्ववेद (5,2,3,1)

अर्थात सूर्य की किरण ,मिट्टी तीव्र वाणी या जलधारा, बिजली ,अग्नि ये सब मिलकर नाना प्रकार के रोग कीटों का नाश करते हैं। अग्नि में भोजन का विष नष्ट करने की भी शक्ति है। ऋषियों ने वेद मन्त्रो में छिपे इन गहन रहस्यों को समझा था। वे यज्ञों के द्वारा राष्ट्र को स्वस्थ करते थे। संभवत: यही कारण था कि यदि एक राष्ट्र ने दूसरे राष्ट्र को हानि पहुंचाने होती थी, तो उस देश के यज्ञों में विभव डालने का प्रयास किया जाता था। यज्ञ की व्यवस्था भंग हो जाने से अनावृष्टि का रोग फैल जाते थे ।समस्त देश दुखी हो जाता था। इसलिए ऋषियों के द्वारा रचाए गए यज्ञों की रक्षा करना राजा का प्रमुख कर्तव्य माना जाता था।

आयुर्वेद के चरक, बृहनिघंटु रत्नाकर ,योग रत्नाकर, गद- निग्रह आदि ग्रन्थों में ऐसे कई योग वर्णित हैं ,जिनकी अग्नि में आहुति देने से वायुमंडल शुद्ध होता है और स्वास्थ्य द्वारा धूनी अंदर लेने से रोग दूर होते हैं। प्रत्येक रोग का शमन अलग प्रकार की सामग्री की आहुतियां देकर किया जाता है। प्राचीन काल में ऋतु अनुसार हवन सामग्री में परिवर्तन किया जाता था। भिन्न-भिन्न व्याधियों की चिकित्सा भिन्न-भिन्न प्रकार की हवय सामग्री के द्वारा किया जाता था।

उदाहरण स्वरुप वरूप निम्नलिखित हैं--

1. **गर्भ संबंधित विकार-**

सोंठ और दूध को अच्छी तरह उबालकर का काढ़ा तैयार कर लिया जाए। इस काढे तथा घृत की अग्नि में 800 के लगभग आहुतियां देने से गर्भ तथा अपरिपक्व अवस्था संबंधीत विकार दूर किए जा सकते हैं।

2.चेचक --

चेचक की चिकित्सा के लिए निम्नलिखित सामग्री लाभप्रद है--

सामान्य सामग्री (2 किलोग्राम) खांड (500 ग्राम) सरसों, हरमल प्रत्येक (250 ग्राम) मुनका, मूल हटी ,बहेड़ा, नीम की निंबोली ,खूब कला, मेहंदी ,हल्दी, चिरायता, प्रत्येक (125 ग्राम) तथा शहद 50 ग्राम, धन इस सामग्री में गो घृत मिलकर यह करने से चेचक रोग नष्ट हो जाता है।

3. क्षय रोग :-यज्ञ करने से क्षय रोग ठीक हो जाता है।

कथं ह तत्र त्वं हनो यस्य कृण्मो हर्विगृहि। (अथर्ववेद 7,76 ,5).

क्षय रोग फैलने पर चंदन कपूर तथा सुगंधित फूलों से बनी धूप बत्तियां जलना हितकारी है। इस रोग के निवारण के लिए 8 से 10 दिन तक नित्य यज्ञ- हवन किया जाए। प्रतिदिन 1000 आहुतियां दी जाए। पीपल, आम और ढाक की समिधाओं का प्रयोग किया जाए। पहले दिन गाय के शुद्ध घी से यक्ष किया जाए, फिर तीन दिन चावल, तिल, जौं,जई व मोठ को घी और शहद में भली भांति मिलकर आहुति दी जाएं। अंतिम दो दिन में ढाक व पीपल की समिधाएं तथा पुटकांडा (अपामार्ग) को घी में अच्छी प्रकार से भिगोकर डालें।

क्षय रोग की दूसरी व तीसरी अवस्था में निम्नलिखित सामग्री का प्रयोग करना चाहिए।

कपूर ,केसर, शहद (प्रत्येक 5 ग्राम) ब्राह्मी, तगर, मकोय, इंद्रायण की जड़, आंवला,हरड़, बादाम, पुनर्नवा, पानड़ी, बालछड़, मुनका ,मण्डूकपर्णी, शालपर्णी,गुल सुर्ख, जायफल, अश्वगंधा, अडूसा, लोंग, विधारा, शतावरी, चीड़ का चूरा, वंशलोचन ,पिस्ता, सुगंधबाला, जयंती खीर, काकोकली ,खूब कलां, गोखरू(प्रत्येक 20 ग्राम) गिलोय ,गूगल (प्रत्येक 80 ग्राम) तथा देसी शक्कर(200 ग्राम)।

यज्ञों के द्वारा रोगों का उपचार किया जा सकता है। इस कथन की पुष्टि निम्नलिखित प्रमाणों से होती है।

१. चेचक के तक के आविष्कारक तथा फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान डॉक्टर हेपकिन का विचार है कि **"घृत जलाने से रोगजनक कृमि मर जाते हैं।"** भारतीय चिकित्सा और आयुर्विज्ञान में घी कृमि नाशक माना गया है ।सभी घृतों में गोघृत को उत्तम माना गया है। इसी से हवन करने का विधान है।

२. फ्रांस के विज्ञान वेता ट्रिलवर्ट कहते हैं कि जलती हुई शक्कर में वायु शुद्ध करने की बहुत बड़ी शक्ति होती है। इससे क्षय, चेचक, हैजा आदि रोग तुरंत नष्ट हो जाते हैं।

3. डॉ एम. ट्रेल्ट मैं मानक किशमिश आदि सुख में फलों को (जिनमें शक्कर अधिक होती है)जला कर देखा ।वे इस निर्णय पर पहुंचे कि धुएं में टाइफाइड ज्वर के जीवाणु केवल 30 मिनट तथा दूसरी व्याधियों के रोगाणु 2 घंटे में मर जाते हैं।

4. प्लेग के दिनों में गंधक जलाई जाती है जो रोग कीटों को नष्ट कर देती है डॉक्टर कर्नल किंग आईएमएस मद्रास चेन्नई के सेनेटरी कमिश्नर ने अपने क्षेत्र में विद्यार्थियों के समक्ष भाषण देते हुए कहा था कि घी और चावल में केसर मिलाकर अग्नि में जलाने से प्लेग से बचा जा सकता है। हैप्पी ने "ब्यूबानिक प्लेग "नामक पुस्तक में लिखा है कि हवन करना लाभदायक और बुद्धिमत्ता की बात है।

5. अमेरिका के एक डॉक्टर ने एक बार मुंबई में भाषण देते हुए कहा था कि हम लोग सैकड़ो वर्षों से इस खोज में थे कि फेफड़ों की तपेदिक को गैस की सुगंधि से अच्छा किया जा सके। हम यज्ञ हवन के द्वारा इसमें सफल हो गए हैं।

6. डॉक्टर फुन्दन लाल अग्निहोत्री मध्य प्रदेश में राजकीय टी.बी. सेनेटोरियम जबलपुर में मेडिकल ऑफिसर थे। वहां उन्होंने यज्ञ द्वारा तपेदिक के रोगियों की चिकित्सा की थी। उसमें 80% रोगियों को यज्ञ हवन से पूर्ण लाभ हुआ। हवन में अग्नि क्रियाओं के द्वारा उत्सर्जित फॉर्मलीन गैस विशेष कर लाभदायक होती है। यह शक्तिशाली कृमि रोधी, वाष्पशील पदार्थ कृमि नाशक और धूल को कृमि रहित करने वाला माना गया है। इसलिए वायु की शुद्धि के लिए फोरमलडायहड लैंप बनाए गए। इन लेम्पों में मिथाइल अल्कोहल तथा वायु को गर्म प्लैटिनम के ऊपर रखकर फोरमलडायहड बनाया जाता है।

CH3OH+O,Pt/heat------>HCHO+H2O.

<u>वृष्टि :</u>

जीवन के लिए प्राणी मात्र तीन पदार्थ वायु ,जल एवं भोजन की आवश्यकता है। यजुर्वेद में यज्ञ को वर्षवृद्धम् - वर्षा बढ़ाने वाला कहा गया है कहा है। यज्ञ के द्वारा वायु शुद्धि के साथ जल एवं भूमि की भी शुद्धि होने से अन्न भी शुद्ध उत्पन्न होता है। हवन में वर्षा के लिए दी गई आहुतियों से वर्षा और वर्षा से जीवों को जीवन, रक्षा और सुख मिलता है। यजुर्वेद (28,39).

तन्वतां यज्ञं बहुधा विसृष्टा। (अथर्ववेद 4, 15 16) अर्थात जब वर्षा करवाने की आवश्यकता हो तो बहुत से यज्ञ विविध प्रकार से करने चाहिएं।

अग्नौ प्रस्ताहुति: सम्यगादित्यमुपतिष्ठते।

आदित्याज्जायेते वृष्टि र्वृष्टेरन्नं तत: प्रजा।। (मनुस्मृति 3,48))

अग्नि में दी गई आहुति सूर्य मंडल में पहुंचती है, उस बादल बनते हैं ,वर्षा होती है, उस अन्न की उत्पत्ति होती है, जिससे प्रजाओं की उत्पत्ति और जीवन चलता है।

अन्नाद् भवन्ति भूतानि पर्जन्यान्नसम्भव:।

यज्ञादि भवति पर्जन्यो यज्ञ: कर्म समुद्भव: ।। (गीता 3,14)

अर्थात यज्ञ से मेघ,मेघ से वर्षा, वर्षा से अन्न की उत्पत्ति होती है । महर्षि दयानंद ने अपने ग्रन्थों में भी यज्ञ हवन से वर्षा संभव मानते हैं। यज्ञ द्वारा होने वाली वर्षा अधिक लाभ प्रद है ,क्योंकि यज्ञ द्वारा जो मेघ बनते हैं, वे दोष रहित होते हैं। अतः वर्षा का जल भी शुद्ध होता है। इसकारण सभी पदार्थ में पवित्रता आ जाती है। महर्षि दयानंद ने इस प्रसंग में लिखा है कि "यज्ञ से जो भाप उठता है ,वह भी वायु और वर्षा के जल को पवित्र और सुगंधित करके सब जग को सुख करता है। शुद्ध जल और वायु के द्वारा

अन्नादि औषधि भी अत्यंत शुद्ध होती है। ऐसे प्रतिदिन सुगंध के अधिक होने से जगत में नित्य प्रति अधिक अधिक सुख बढ़ता है। यह फल अग्नि में होम करने के बिना दूसरे प्रकार से होना असंभव है"।

अग्नेर्वै धूमो जायते धूमाद भ्रमभ्राद वृष्टिः। अर्थात अग्नि से धूम, धूम से बादल और मेघ से वृष्टि होती है। शतपथब्राह्मण (5,3,5,17). पाश्चात्य विद्वान डॉक्टर हार्टनिंग ने लिखा था," अफ्रीका के जंगलों में घास -फूस के बड़े भारी ढेर में आग लगने से वहां भी जहां वर्षा की कोई आशा नहीं थी मेह आ गया और मेह बरसाने के लिए आग का जलाना गुणकारी है। अमेरिका विद्वान एंड्रो जैक्सन डेविस ने" मेह बरसाने का विज्ञान" शीर्षक लेख में वर्षा के लिए जो सिद्धांत दिया था, वह यज्ञ के सिद्धांत से मिलता जुलता है । यज्ञ -धूम में धुली कणों की बहुलता होती है। लकड़ी के जलने से भी कुछ कार्बन धूल बन जाती है। कई अन्य पदार्थ भी अच्छी प्रकार जले बिना वायु में मिल जाते हैं। इन कणों के चारों ओर पानी जमकर आकाश को मेघाच्छादित कर देता है।वैज्ञानिक धूल को वर्ष में सहायक मानते हैं। एटकन ने सिद्ध किया कि वायु में घूमने वाले सभी प्रकार के धूल कण जल युक्त पवनों के ठंडा होकर जमने के लिए "जामन" का कार्य करते हैं। यदि वायु में यह धूल कण न हो, तो पवन को ठंडा करने के लिए तापांश का अधिक कम होना अनिवार्य है। यदि धूल रहित नमीयुक्त वायु में से पराबैंगनी किरणें या सूर्य की साधारण करने भी गुजरने दी जाए तो इस न्यूनता की कुछ अंश तक पूर्ति हो सकती है। धनात्मक विद्युत की अपेक्षा ऋणात्मक विद्युत से युक्त धुलीकरण पानी के जमाव में अधिक उपयोगी सिद्ध हुए हैं। वर्षा में विद्युत का भी कुछ लाभ है। इस प्रकार का भाव निम्नलिखित मंत्र से प्रकट होता है -

अपामग्निस्तनूभिः संविदानो यह ओषधीनामधिपा बभूव।

स नो वर्ष वनुतां जातवेदाः प्राणों प्रजाभ्यो अमृतं दिवस्परि।।(अथर्ववेद 4 ,15, 10)

अर्थात मेघ में स्थित जलों की विद्युत जलों के शरीरभूत मेघों से मिलकर रहती है, जो की वनस्पतियों का स्वामी ,पालक है। वह समस्त पदार्थ में व्यापक अग्नि हमारे लिए वृष्टि को और आकाश से बरसते अमृत रूपी जल को और पशुओं के लिए प्राण देवें। वायु के संघर्ष से मेघों में बिजली उत्पन्न होती है। वह ऋण और धन रूप में उत्पन्न होकर पुनः परस्पर मिलती है और कड़कती है। उनसे जल में विशेष प्रकार की प्राण शक्ति और मेघों के जलों की वृद्धि भी होती है । औषधियां अधिक जल प्राप्ति होती हैं और प्रजाएं सुख होती हैं।

इसलिए वर्षा में बिजली का भी विशेष महत्व है। संभवत यज्ञ भी सर्वप्रथम आकाश में बिजली भरता है, फिर मेघ बनते हैं और वर्षा होती है। हवन के द्वारा धूम पैदा होता है, जिसमें पर्याप्त मात्रा में वाष्प धुलिकण आदि रहते हैं। वैज्ञानिकों ने धूम को वायु में बहुत सूक्ष्म कणों का कोला◌ॅइडी विलन (घोल) माना है। वायु में तैरने वाले इन सभी कोला◌ॅइडी कणों में ऋणात्मक विद्युत

होती है तथा एटकन के मत अनुसार ऋणात्मक विद्युत से युक्त कण ही वर्षा में सर्वाधिक सहयोगी हैं। हवन करते समय कुछ घृत बिना जले ही अति सूक्ष्म कणों के रूप में उड़ जाता है । यह घी बहुत से धुलि कणों पर अपनी परत जमा देता है। इस प्रकार के सभी कण प्रायः बिजली से युक्त होते हैं। इनमें नमी ग्रहण करने की विशेष शक्ति होती है। इन पर जब नमी की एक पतली परत जम जाती है , फिर इस ओर अधिक नमी खींचती चली जाती है। इस प्रकार मेघ बनने में इन कणों का महत्वपूर्ण योगदान है।

अग्निहोत्र केवल मेघ ही नहीं बनता, अपितु उन्हें बरसाने में भी सहायता करता है। मेघों के बरसाने के लिए वायु में नमी की बहुलता का होना अनिवार्य है। प्रत्येक तापांश पर वायु में एक विशेष सीमा तक ही नमी रह सकती है।हवा जितनी अधिक गर्म होगी उतना ही अधिक जल धारण कर सकेगी। हवन के कारण तापमान कुछ बढ़ जाता है। अतः वायु पर्याप्त नमी खींच लेती है ,फिर हवन के द्वारा नीचे की वायु गर्म होकर हल्की हो जाती है। अतः यह वायु ऊपर चढ़ते समय मेघ को भी अपने साथ ले जाती है (दृष्टव्य यजुर्वेद 6,16) यहां तापमान की न्यूनता के कारण वायु समस्त नमी को धारण करने में असमर्थ हो जाती है। तब मेघ बरसाने लगते हैं।

यज्ञ द्वारा वर्षा करवाने का विधान प्राचीन भारतीय संस्कृति में अंतर निहित है। प्राचीन काल में प्रत्येक नगर और ग्राम में बड़े-बड़े यज्ञों का आयोजन किया जाता था।आज भी गांवों में प्रथा प्रचलित है। इसका स्वरूप बदल चुका है। अनावृष्टि के समय गांव के सभी लोग मिलकर यज्ञ करते हैं, फिर भारी संख्या में उपस्थित लोगों को भोजन करवाया जाता है। उनका विश्वास है किस प्रकार इंद्र देवता प्रसन्न होकर वर्षा करेंगे। इस सारे कार्य को लोग ,"जग" कहते हैं। यह यज्ञ का बिगड़ा हुआ रूप है। इस प्रकार हवन को वर्ष में सहायक माना जाता रहा है।

शास्त्रीय विधि से हवन से वर्षा करवाई जा सकती है इस प्रसंग में छोटे-छोटे प्रयोग कई बार किया जा चुके हैं जो प्रायः सफल रहे हैं । विद्वानों ने वृष्टि यज्ञ हेतु प्रयोग की जाने वाली सामग्री की भी जानकारी अपने लेखों में नहीं दी ,लेकिन कुछ संकेत यत्र तत्र मिलते हैं, जैसे-

धृतंपवस्य धारयि यज्ञेषु देववीतमः।

अस्मभ्यं वृष्टिमा पव।।(ऋ.9,49,3) घृत वद्भिश्च हव्यै।(ऋ.7,3,7)

सं बर्हिरक्तं हविषा घृतेन। (अथर्ववेद 7,98,1) इन मन्त्रों में वृष्टि यज्ञ के लिए घृत को हव्य- द्रव्य माना गया है।

पयः होमो दधातु मे। सोमाय स्वाहा। (अथर्ववेद 19,43,5).

अर्थात ' सोम के निर्माण हेतु- पय (पेय-जल,अन्न, औषधि, वनस्पति ,दूध ,घी आदि) की आहुतियां देनी चाहिए। इसके लिए विशेष प्रकार की लकड़ियों और सामग्री जैसे (जल में पैदा होने वाले सिंघाड़ा,समूचा कमल,गट्टा, नागरमोथा,सिरवाल की एक -

एक किलोग्राम मात्रा सामान्य हवन के लिए 7 किलोग्राम और देसी शक्कर को गोघृत एक किलोग्राम में मिलाकर आहुतियां दी जाए।

कृत्रिम वर्षा के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान कर रहे हैं । कुछ सफलता प्राप्त हुई है। जब आकाश में मेघ छाए हुए होते हैं तो उनके ऊपर खुश्क बर्फ का छिड़काव किया जाता है, जिससे बादलों का तापमान कम हो जाता है तथा 15 से 20 मिनट में वर्षा होने प्रारंभ हो जाती है।इस प्रकार न बरसने वाले बादलों को भी बरसाया जा सकता है। ऑस्ट्रेलिया और अमेरिका में इसका लाभ उठाया गया है। ऋग्वेद के (8,32,36)में भी इस विधि का संकेत किया गया है-

अहन्वृतत्रमृचीषम और्णवाभमहीशुवम्।हिमेनाविध्यदर्बुदम्।

अर्थात चमक दमक वाले तथा सूर्य की भांति गति करने वाले मेघना को विद्युत फाड़ता है तथा मेघों को बर्फ द्वारा बांधता है। यज्ञ हवन द्वारा बादलों का भी निर्माण किया जा सकता है। अतः यदि आकाश मेघाच्छादित न हो तो भी वर्षा की जा सकती है। अनावृष्टी की भांति अतिवृष्टि की समस्या को भी द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है।

यजुर्वेद में (15, 6) में स्पष्ट आदेश है- **विष्टम्भेन वृष्ट्या वृष्टिं जिन्व।** अर्थात् वर्षा के रोकने के लिए वृष्टि को जीतो। इसमें हवन में वर्षा रोकने वाली सामग्री एवं समिधाएं का प्रयुक्त की जाती है। अंत में यदि वर्षा के क्षेत्र में गंभीर अन्वेषण किया जाए ,तो यजुर्वेद (22, 22)में की गई भक्त की प्रार्थना है ,"निकामे निकामे न: पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधय:पच्यन्तां योगक्षेमो नकल्पताम्"।। जब जब हम इच्छा करें तब तब मेघ बरसे और हमारा फल, फूल और औषधियों से वातावरण हरा भरा रहे।

सारांश

पर्यावरण संरक्षण एवं शुद्धिकरण में यज्ञ हवन का अहम योगदान है। यज्ञ से उत्पन्न होने वाले वाष्प एवं अन्य उड़नशील पदार्थ कीटाणु, कीटाणु,जीवाणु, विषाणु एवं रोगाणुओं को नष्ट कर देते हैं। यज्ञ से हवा शुद्ध होती है, शुद्ध वायु से वर्षा के माध्यम से जल पवित्र होता है और इसी से पवित्र अन्न एवं अन्य खाद्य पदार्थ उत्पन्न होते हैं। यज्ञ से उत्पन्न रसायन औषधि रूप में वर्षा के माध्यम से भूमि की उर्वरा शक्ति की वृद्धि में सहायक है। केंद्रीय विज्ञान एवं औद्योगिक अनुसंधान प्रयोगशाला,चंडीगढ़, (2020 कोरोना काल)के एक शोध में पता चला है कि यज्ञ हवन से उत्सर्जित रसायनों का अधिक प्रभाव 7 दिन एवं दीर्घकालिक प्रभाव लगभग 29 दिन तक हवन किए गए क्षेत्र (घर,पशुशाला, प्रयोगशाला एवं अन्य घिरे हुए स्थान) में रहता है। यह प्राचीन आयुर्वेदिक स्वास्थ्यवर्धक पर्यावरण शुद्धि का सर्वोत्तम साधन माना गया है। महाविद्यालय के साथ अनेकों आसपास के गांव के घर, मंदिर, विद्यालयों,खेत एवं अन्य स्थानों पर हवन किए गए और विश्लेषण में उपरोक्त बात सिद्ध हुई।

अभिस्वीकृति

एक लेखक (ज.प. देशवाल, J.P.Deshwal) प्राचार्य राजकीय महाविद्यालय नरवाना द्वारा यज्ञ- हवन पर प्रयोगशाला एवं अन्य क्षेत्रों में अन्वेषण करने की स्वीकृति एवं प्रेरणा के लिए कृतज्ञ है।

संदर्भ एवं टिप्पणियां :--

1) The wealth of India raw material volume 1 - lV, publication and Information Directorate, CSIR, New Delhi 1948 -1972.
2) B.D. Basu (Major) Indian Medicinal Plants volume 2-4 Periodical Experts Delhi (1975).
3) R. Rastogi and B.N. Mehrotra, compendium of Indian Medical Plants, Central Drug Research Institute, Lucknow and Publication and Information Directorate New Delhi (1993).
4) P.K.Warrier V.P.K.Nambiar and C.Ramankutty, Indian Medicinal Plants Volume 1- 4, Orient Longman ltd., 160, Anna Salai, Madras (1993) .
5) सत्यार्थ प्रकाश तृतीय समुल्लास, तुलना: ऋषि दयानंद सरस्वती के पुणे प्रवचन (व्याख्यान 7)।
6) Hawley and Palmer,U.S. Department Agr.Bull., 129 (1914).
7) G.Burgge Industrie der Helzdistillation Produkta',Theeder Steinkoff,Dresdren&Leipzig (1927).
8) Klason quoted in Cellulose Chemistry by Henser
9) Satyarth Prakash, Agnihotra, Sarvdeshik Arya Pratinidhi Sabha, Delhi, (1937),pp. 130-31.
10) डॉक्टर कुंदन लाल अग्निहोत्री, हवन यज्ञ द्वारा क्षय रोग की चिकित्सा (1956).
11) I.L.Finar, Organic Chemistry Longman, London (1973).
12) J.F. Dastur, Medicinal Plants of India and Pakistan D.B. Taraporewala & Co.limited, Bombay (1977).
13) ऋषि दयानंद सरस्वती, संस्कार विधि सामान्य प्रकरणम:तुलना पारस्कर ग्रह सूत्र क.4 का, का.1का गदाधर भाष्य।
14) सत्यार्थप्रकाश , तृतीय समुल्लास, तुलना: ऋषि दयानंद सरस्वती के पुणे प्रवचन (व्याख्यान सात), यजुर्वेद भाष्य (1,8)
15) ऋषि दयानंद सरस्वती, पंच महायज्ञ विधि, संस्कार विधि,(क) सामान्य प्रकरण (ख) ग्रह आश्रम प्रकरण अग्निहोत्र(ग) ग्रह आश्रम प्रकरण (घ)अंत्येष्टि प्रकरण सामान्य प्रकरण:।

16) भावप्रकाश निघण्टु (श्री भाव मित्र कृत), टिकाकार विश्वनाथ द्विवेदी, मोतीलाल बनारसी दास दिल्ली, (1959)

17) Bhaskar Govind Ghanekar with Hindi commentary, vol. 1,(Sutra & Nidansthan), Mehar Chand, Lakshman Das, Lahore (1936).

18) J.F.Dashur, useful plant of India and Pakistan DB Taraporwala and Co. limited Mumbai (1964),PP. 31-32.

19) सुश्रुत -संहिता, टिकाकार शंभू नाथ पांडे श्री सरस्वती पुस्तकालय चौक कानपुर (1952).

20) K.R. Kiratkar and B.D. Basu Indian medicinal plant volume 1-2 Bishan Singh, Mahindra pal Singh, New Connaught place Dehradun (1984)

21) W.Dymock.C.G.H. Warden and the Hopper pharmacographia Indica volume 1-3, Thackar, Spink and Co. Kolkata (1890- 1891).

22) R.N. Chopra, I.C.

23) Chopra, K.L. Handa and L.D. Kapoor indigenous drug of India Dhur and Sons Kolkata (1958).

24) Jaisi fresh Pharma,J., XV.,361

25) रमेश बेदी, त्रिफला हिमालय, हर्बल इंस्टिट्यूट, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार।

26) T.P.Hilditch and K.S. Murti ,J Soc. chem. Ind. 310 (1933) cf 9.ज।

27) G.D.Elsdom and H.Hawley, Analyst,38,3-7(1912).

28) A.H. Church Food- Grain of India, Chapman and Hall, London (1886).(क) पृ.73,(ख)पृ.95,(ग)पृ.99,(घ)पृ.128,(ड़)151.

29) The wealth of India: Raw Material, Vol 1-X1, Publication and Information Directorate, CSIR, New Delhi (1948- 1972).

30) R. Rastogi and B.N. Mehrotra , Compendium of Indian Medicinal Plant, Central Drug Research Institute Lucknow and Publication and Information Directorate New Delhi (1993)

31) P.K.Warrier , V.P.K.Nsmbiar and C.Raman Kutti Indian Medicinal Plant Vol. 1-1V, Orientation Longman Ltd.160, Anna Salai, Madras (1993).

32) GD Elsdon & H.Hawley, Analyst 38, 3-7 (1912).

33) G.S Jamieson and W.F.Baguman,J.Am.Chapman and Hall, London (1886)

34) Satyarth Prakash Agnihotra , The Sarvdeshik Arya Pratinidhi Sabha Delhi (1937) PP 130-131.

35) डॉक्टर फुन्दनलाल अग्निहोत्री, हवन यज्ञ द्वारा क्षय रोग की चिकित्सा,(1949) (1956).

36) I.L. Finnar Organic Chemistry Long Man and London (1973).

37) T.S.Wheeler and E.W.Blair,J.Soc. Chem.Ind.42,421(1923)

38) Louise Kelly, Organic Chemistry,McGraw Hill,New York (1957).

39) देव यज्ञ पर दीपिका में," हिंदू मैसेज" के "मेडिकल सप्लीमेंट "से उदित अंश.

40) रामनाथ वेदालंकार आर्ष ज्योति, समर्पण शोध संस्थान, साहिबाबाद ,1991, पृष्ठ 262.

41) Akhil Ranjan Majumdar modern pharmacology and safety guide Calcutta scientific Publication scientific Publication (1957)

42) Hampton The Scente of Flower and Leaves.

43) लीडर (इलाहाबाद से प्रकाशित समाचार पत्र), 6 अप्रैल 1955।30. सरस्वती, अक्टूबर 1991.

44) सद्धर्म प्रचारक ,2 फाल्गुन, संवत 1968.

45) मास्टर आत्माराम ,वैदिक विवाह -आदर्श, पृष्ठ 268.

46) A.J. Davis Harmonical Man,A.J. Davis & Co. publisher 274 Canal Str., New York, pp. 31-131.

47) पंडित वीर सेन ,"वैदिक दृष्टि विज्ञान", नामक लघु पुस्तक वेद सदन,72 महारानी पथ इंदौर मध्य प्रदेश से प्रकाशित हुई थी।

48) K. R. Kirti kar and B.D. Basu Indian medicinal plant volume 1-2, Bishan Singh Mahendra pal Singh new Connaught place Dehradun (1984).

49) W.DymockC.G.H Warden and the Hopper Pharmacographiya Indica volume 1-3. Thacker, Spink and Co., Calcutta (1890-91)

50) R.N. Chopra I.C.Chopra K.L. Honda and L.D. Kapoor indigenous drug of India and son Calcutta (1958).

51) W. Dymock, C.G.H.Warden and D.Hooper, Pharmacographia Indica,Vol.lll, Thacker,Spink&Co.1890,pp.200-203,pp.217-32,pp.417-20.